मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय, लातूर.

शै. वर्ष - 2022-2023

विभाग - हिंदी

प्रकल्पलेखन [project work]

अनुक्रमणिका.

अ.क्र.	विषय
1	परिचय, उद्देश, परिणाम
2	सूचना
3.	छात्र सूची एवं मार्गदर्शक
4.	विषय विभाजन सूची
5.	प्रकल्पलेखन सूची. 1) नाट्यविद्या का परिचय 2) हिंदी उपन्यास का उद्भव और विकास 3) अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व 4) हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास
6.	सांख्यिकी अहवाल
7.	प्रमाणपत्र.

प्रा. डॉ. सविता किर्ते - [signature]

प्रा. डॉ. कुमार बनसोडे - [signature]

Scanned with OKEN Scanner

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट
श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय,
लातूर.

शै. वर्ष 2022-2023.
विभाग :- हिंदी
प्रकल्पलेखन [Project work]
विषय :- नाट्यविद्या का परिचयात्मक विवेचन

* उद्देश :-

1) सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता को व्यक्त करना।
2) सार्वभौमिक विषय को संप्रेषित करना।
3) नाटक विधा के माध्यम से विचार और संवेदनशीलता को जागृत करना।

* परिणाम :-

① नाट्य विधा से छात्र परिचित होंगे।
② नाटक के तत्व को समझेंगे।
③ वर्तमान में नाटक विधा का महत्व समझ सकेंगे।

— o — o — o —

Scanned with OKEN Scanner

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख महिला महाविद्यालय लातूर.

शै. वर्ष - 2022, 2023.

विभाग:- हिंदी

प्रकल्पलेखन [project work]

विषय :- हिंदी उपन्यास का उद्भव और विकास

* उद्देश :-

1) हिंदी उपन्यास का उद्भव एवं विकास को समझ लेना।

2) हिंदी उपन्यास और उपन्यासकारों की जानकारी प्राप्त करना।

3) उपन्यास विधा में छात्रों की रुची निर्माण करना।

* परिणाम :-

1) प्रकल्पलेखन के माध्यम छात्र अनुसंधान के महत्त्व को समझ पायेंगे।

2) छात्र अनुसंधान पद्धति को समझ सकेंगे।

3) उपन्यास विधा के माध्यम से वैचारिक एवं भावात्मक प्रवृत्ति को विकसित करना।

——— o ——— o ———

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख महिला महाविद्यालय, लातूर.

शै. वर्ष - 2022-2023

विभाग :- हिंदी

प्रकल्पलेखन [Project work]

विषय :- अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व

* उद्देश :-

1] छात्रों को अपनी मातृभाषा के ज्ञान के अतिरिक्त अन्य भाषा के शब्द एवं वाक्य के निर्माण की जानकारी देना।

2] विभिन्न भाषाओं के साहित्य से परिचित होने के अवसर प्रदान करना।

3] छात्रों के शब्द भंडार में वृद्धी करना।

* परिणाम :-

1) छात्र वर्तमान में अनुवाद की आवश्यकता को समझ पायेंगे।

2] अनुवाद का महत्व रोजगार की दृष्टी से जान लेंगे।

3] अनुवाद के जरिए छात्र अपना शब्दभंडार विकसित करेंगे।

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट
श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय,
लातूर.

शै. वर्ष - 2022 - 2023
विभाग :- हिंदी
प्रकल्पलेखन [project work]

विषय :- हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास।

* उद्देश :-

1] कहानी विधा में के प्रति रूचि विकसित करना।

2] सृजनात्मक शक्ति का विकास करना।

3] कल्पना और स्मरण शक्ति का विकास करना।

* परिणाम :-

1] छात्र कहानी विधा के उद्भव एवं विकास को समझेंगे।

2] कहानी की ऐतिहासिकता को जान लेंगे।

3] कहानी विधा तथा कहानीकार से परिचित होंगे।

— o — o —

Sushiladevi Deshmukh Senior ... LATUR

Scanned with OKEN Scanner

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट
श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय, लातूर.

शै. वर्ष - 2022-2023
विभाग :- हिंदी
प्रकल्पलेखन - [project work]

सूचना :-

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय के ~~सभी~~ छात्रों को सूचित किया जाता है कि जिन छात्रों के हिंदी विषय के अंतर्गत प्रकल्पलेखन का कार्य दिया गया वे हिंदी विभाग से संपर्क करे और प्रकल्पलेखन का विषय निश्चित करके, विषयानुसार प्रकल्पलेखन हिंदी विभाग में दि. 19-08-2023 तक लाकर देना अनिवार्य है।

मार्गदर्शक

1) प्रा. डॉ सविता कोर्ते
2) प्रा. डॉ कुमार बनसोडे.

हिंदी विभाग प्रमुख .

PRINCIPAL
Smt.Susheeladevi Deshmukh
Senior College, LATUR

Scanned with OKEN Scanner

मंजरा चैरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय

लातूर

शै.वर्ष - 2022-2023

विभाग :- हिंदी

प्रकल्प लेखन [project work]

क्र.	छात्र का नाम	कक्षा class
1	पोतदार तन्मय बलीराम	BA FY
2	पाराशिल शिवकुमार संतोष	BA FY
3	पाकोते संभाजी लक्ष्मण	BA FY
4	पोटे विलास रामराव	BA FY
5	ठाकरे सुरेश नामदेव	BA FY
6	पतंगे आदिनाथ बापू	BA FY
7	भूमे दिनेश सुभाष	BA FY
8	राणेऽ कृष्णा संजय	BA FY
9	मोरे ऋषिकेश सुधाकर	BA TY
10	जाधव शैलेश श्रीराम	BA TY
11	रोंगे मन्मथ शिवाजी	BA TY
12	जाधव ~~लक्ष्मण~~ संतोष लक्ष्मण	BA TY
13	भंडगे शिवराम नारायण	BA TY
14	शेख अमन अकबर	BA TY
15	शेख मोजिद सादिक	BA TY

मांजरा चैरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख सिनियर महाविद्यालय,
लातूर.

शै. वर्ष - 2022-2023

विभाग :- हिंदी

प्रकल्पलेखन [project work]

विषय :- नाट्यविधा का परिचयात्मक विवेचन

छात्र उपस्थिती अहवाल.

क्र.	छात्र का नाम	कक्षा Class	हस्ताक्षर
1	पोतदार तन्मय बळीराम	BA FY	[signature]
2	धाराशिव शिवकुमार संतोष	BA FY	[signature]
3	चाकोते संभाजी लक्ष्मण	BA FY	[signature]
4	पोटे विलास रामराव	BA FY	[signature]

Sushiladevi Deshmukh Senior ... Latur
LATUR
Scanned with OKEN Scanner

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख सिनिअर महाविद्यालय,
लातूर.

शै. वर्ष - 2022 - 2023

विभाग :- हिंदी

प्रकल्पलेखन [project work]

विषय :- हिंदी उपन्यास का उद्भव और विकास.

छात्र उपस्थिती अहवाल.

क्र.	छात्र का नाम	कक्षा class	हस्ताक्षर
1	ठाकरे सुरेश नामदेव	BA FY	Thakre
2	पतंगे अविनाश बापू	BA FY	Patang
3	गुमे दिनेश सुभाष	BA FY	[signature]
4	राठोड कृष्णा संजय	BA FY	[signature]

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट
श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय, लातूर

शै. वर्ष - 2022 - 2023

विभाग - हिंदी

प्रकल्पलेखन [project work]

विषय :- अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्त्व.

छात्र उपस्थिती अहवाल.

अ.क्र.	छात्र का नाम	कक्षा class	हस्ताक्षर
1	मोरे प्रगतिकिरा सुधाकर	BA TY	More
2	जाधव शैलेश श्रीराम	BA TY	Jadhav
3	रेंगे मनाली शिवाजी	BA TY	Range
4	जाधव संतोष [illegible]	BA TY	Jadhv

Scanned with OKEN Scanner

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय, लातूर.

Smt. Sushiladevi Deshmukh Senior College, Latur

शै. वर्ष - 2022 - 2023

विभाग - हिंदी.

प्रकल्पलेखन [project work]

विषय :- हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास.

छात्र उपस्थिती अहवाल.

अ.क्र.	छात्र का नाम	कक्षा Class	हस्ताक्षर
1	भंडगे श्याम नारायण	BATY	[signature]
2	शेख समन अख्तर	BATY	[signature]
3	शेख मोहसिन सादिक	BATY	[signature]

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट

श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय

लातूर

शै. वर्ष - 2022-2023

विभाग - हिंदी

प्रकल्पलेखन [project work]

प्रकल्पलेखन विषय विभाजन :-

अ. क्र.	छात्र का नाम	Class	प्रकल्प लेखन विषय	मार्गदर्शक
1	पोनदार मन्मथ बळीराम	BA FY	नाट्यविधा का परिचयात्मक विवेचन	डॉ सुनिता किर्ते
2	धारागिरे शिवकुमार धनंजय	BA FY	—— " ——	
3	चाकोते खेमाजी लक्ष्मण	BA FY	—— " ——	
4	पोटे विलास रामराव	BA FY	—— " ——	
5	ठाकरे सुरेश नामदेव	BA FY	हिंदी उपन्यास का उद्भव और विकास	डॉ सुनिता किर्ते
6	पतंगे आदिनाथ बापू	BA FY	—— " ——	
7	भूमे दिनेश सुभाष	BA FY	—— " ——	
8	राठोड कृष्णा मंजय	BA FY	—— " ——	
9	मोरे ऋषिकेश सुधाकर	BA TY	अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व	डॉ कुमार बनसोडे
10	जाधव शैलेश श्रीराम	BA TY	—— " ——	
11	शिंगे मन्मथ शिवाजी	BA TY	—— " ——	
12	जाधव संतोष लक्ष्मण	BA TY	—— " ——	
13	भंडगे शिवराम नारायण	BA TY	हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास	डॉ कुमार बनसोडे
14	शेख अमन अकबर	BA TY	—— " ——	
15	शेख माजिद सादिक	BA TY	—— " ——	

मांजरा चॅरिटेबल ट्रस्ट
श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख वरिष्ठ महाविद्यालय
लातूर
शै. वर्ष - 2022-2023
विभाग - हिंदी
प्रकल्पलेखन [project work]
संक्षिप्त अहवाल.

विभाग - हिंदी	शै. वर्ष - 2022-2023
प्रवेशित विद्यार्थी संख्या — 15	प्रकल्पलेखन मार्गदर्शक - 1) डॉ. सविता किर्ते 2) डॉ. कुमार बनसोडे.
प्रकल्पलेखन कालावधी	कालावधी 19-08-2023 से 19-09-2023

Scanned with OKEN Scanner

मांजरा चैरिटेबल ट्रस्ट
श्रीमती सुशीलादेवी देशमुख महिला महाविद्यालय
लातूर

शै. वर्ष - 2022-2023

विभाग :- हिंदी

प्रकल्पलेखन - [project work]

संक्षिप्त अहवाल

प्रकल्पलेखन के माध्यम से छात्रों को विशिष्ट विशिष्ट विषय पर प्रकल्पलेखन करके अनुसंधान पद्धति से परिचित करवाया जाता है। महाविद्यालयीन जीवन से ही छात्रों के अंदर शोधवृत्ति जागृत करने का यह एक प्रयास है।

शै. वर्ष 2022-2023 के लिए हिंदी विभाग की ओर से छात्रों के लिए प्रकल्पलेखन विविध विषय देकर तैयार किया है। इसमें पंद्रह छात्रों ने सहभाग लिया, उनमें पांच-पांच छात्रों का ग्रुप तैयार करके उन्हें क्रमशः नाट्यविधा का परिचयात्मक विवेचन, हिंदी अखबार का उद्भव और विकास, अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व, तथा हिंदी कहानी का उद्भव और विकास आदि विषय दिए गए। इन विषयों के माध्यम से छात्रों में विषय से संबंधित ज्ञान, रुचि एवं अध्ययनशीलता का निर्माण हो इसी उद्देश से प्रकल्पलेखन का आयोजन किया गया।

प्रकल्पलेखन के माध्यम से एक विषयानुरूप उद्देश और परिणाम को प्रस्तुत किया गया है।

प्रा. डॉ. साधना किर्ते — [signature]
प्रा. डॉ. कुमार बनसोडे. — [signature]

Scanned with OKEN Scanner

(1)

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that, पानदार लक्ष्मण बळीराम (BP FY), दायगिन्य शिवकुमार गोपाळ (FY),
Mr./Mrs. [illegible] संभाजी लक्ष्मण (FY), पोटे विलास रामराव (FY),
has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

नाट्यविधा का परिचयात्मक विवेचन.

Conducted by the Department of हिंदी. in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ सविता किर्ते

Head of the Department

Scanned with OKEN Scanner

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. ठाकरे सुरेश नामदेव (FY), पतंगे आदिनाथ बापू (FY), धुमे दिनेश सुभाष (FY), गाढेकर काका संगम (FY)

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

हिंदी उपन्यास का उद्भव और विकास.

Conducted by the Department of हिंदी in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ साधना किर्ते

Head of the Department

Scanned with OKEN Scanner

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. मोरे व्यंकटेश सुधाकर (BATY), जाधव शैलेश श्रीराम (TY), रोंगे मन्मथ शिवाजी (TY) जाधव संतोष लक्ष्मण (TY)

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व.

Conducted by the Department of हिंदी in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ कुमार ननसाडे

Head of the Department
डॉ सविता किर्ते

4

MANJARA CHARITABLE TRUST'S
SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR
Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. पंडगे श्याम नारायण (BA74), शेख जमन अकबर (75), शेख मोहसिद्दि सादिक (77)

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास

Conducted by the Department of हिंदी in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ कुमार बनसोडे

Head of the Department
डॉ सविता किर्ते

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. पोतदार तन्मय सतीशराव (BP F4), दायगिल शिवकुमार गोपाल (F4), चाकोते संभाजी महादेव (F4), पोटे विलास रामराव (F4),

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

नाट्यविद्या का परिचयात्मक विवेचन।

Conducted by the Department of हिंदी। in the academic year 2022-23.

Project Guide

डॉ सविता किर्ते

Head of the Department

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. ठाकरे सुरेश नामदेव (F4), पतंगे आदिनाथ बापू (F4), भुगे दिनेश सुभाष (F4), राठोड काजल संजय (F4)

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

हिंदी उपन्यास का उद्भव और विकास ·

Conducted by the Department of हिंदी in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ सविता किर्ते

Head of the Department

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. मोरे ऋषिकेश सुधाकर (BA-TY), जाधव शैलेश श्रीराम (TY), रोंगे मन्मथ शिवजी (TY) जाधव संतोष लक्ष्मण (TY)

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व.

Conducted by the Department of हिंदी in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ कुमार बनसोडे

Head of the Department
डॉ सविता किर्ते

Scanned with OKEN Scanner

MANJARA CHARITABLE TRUST'S

SMT. SUSHILADEVI DESHMUKH SENIOR COLLEGE, LATUR

Project Work / Field Work

Certificate

This is to certify that,

Mr./Mrs. धोंडगे श्याम नारायण (BA T.Y.), शेख अमन अकबर (T.Y.) शेख मोहसिन शादिक (T.Y.)

has successfully completed the Project Work/ Field Work entitled

हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास

Conducted by the Department of हिंदी. in the academic year 2022-23.

Project Guide
डॉ कुमार बनसोडे

Head of the Department
डॉ सविता किर्ते

नाट्यविधा का परिचयात्मक विवेचन

नाटक किसे कहते है? नाटक का क्या अर्थ है (natak kise kahate hain)

नाटक "नट" शब्द से निर्मित है जिसका आशय है--- सात्विक भावों का अभिनय।

नाटक दृश्य काव्य के अंतर्गत आता है । इसका प्रदर्शन रंगमंच पर होता है। भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने नाटक के लक्षण देते हुए लिखा है-- "नाटक शब्द का अर्थ नट लोगों की क्रिया है। दृश्य-काव्य की संज्ञा-रूपक है। रूपकों मे नाटक ही सबसे मुख्य है इसी रूपक मात्र को नाटक कहते है।

आज के इस लेख मे हम नाटक का विकास क्रम, नाटक की परिभाषा और नाटक के तत्वों को जानेंगे।

हिन्दी मे नाटक लिखने का प्रारंभ पद्य के द्वारा हुआ लेकिन आज के नाटकों मे गद्य की प्रमुखता है। नाटक गद्य का वह कथात्मक रूप है, जिसे अभिनय संगीत, नृत्य, संवाद आदि के माध्यम से रंगमंच पर अभिनीत किया जा सकता है।

नाटक की परिभाषा {natak ki paribhasha}

बाबू गुलाबराय के अनुसार " नाटक मे जीवन की अनुकृति को शब्दगत संकेतों मे संकुचित करके उसको सजीव पात्रों द्वारा एक चलते-फिरते सप्राण रूप में अंकित किया जाता है।

नाटक मे फैले हुए जीवन व्यापार को ऐसी व्यवस्था के साथ रखते है कि अधिक से अधिक प्रभाव उत्पन्न हो सके। नाटक का प्रमुख उपादान है उसकी रंगमंचीयता।

हिन्दी साहित्य मे नाटकों का विकास वास्तव मे आधुनिक काल मे भारतेंदु युग मे हुआ। भारतेंदु युग से पूर्व भी कुछ नाटक पौराणिक, राजनैतिक, सामाजिक, आदि विषयों को लेकर रचे गए। सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी मे रचे गए नाटको मे मुख्य है-- ह्रदयरामकृत- हनुमन्नाटक, बनारसीदास- समयसार आदि।

हिन्दी नाटक का विकास क्रम {natak ka vikas}

1. भारतेन्दु युगीन नाटक 1850 से 1900 ई.

Scanned with OKEN Scanner

नाट्यविधा का परिचयात्मक विवेचन :---

नाटक किसे कहते है? नाटक का क्या अर्थ हैं {natak kise kahate hain}

नाटक "नट" शब्द से निर्मित है जिसका आशय है--- सात्त्विक भावों का अभिनय।

नाटक दृश्य काव्य के अंतर्गत आता है । इसका प्रदर्शन रंगमंच पर होता है। भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने नाटक के लक्षण देते हुए लिखा है-- "नाटक शब्द का अर्थ नट लोगों की क्रिया हैं। दृश्य-काव्य की संज्ञा-रूपक है। रूपकों मे नाटक ही सबसे मुख्य है इससे रूपक मात्र को नाटक कहते है।

आज के इस लेख मे हम नाटक का विकास क्रम, नाटक की परिभाषा और नाटक के तत्वों को जानेंगे।

हिन्दी मे नाटक लिखने का प्रारंभ पद्य के द्वारा हुआ लेकिन आज के नाटकों मे गद्य की प्रमुखता है। नाटक गद्य का वह कथात्मक रूप है, जिसे अभिनय संगीत, नृत्य, संवाद आदि के माध्यम से रंगमंच पर अभिनीत किया जा सकता है।

नाटक की परिभाषा {natak ki paribhasha}

बाबू गुलाबराय के अनुसार " नाटक मे जीवन की अनुकृति को शब्दगत संकेतों मे संकुचित करके उसको सजीव पात्रों द्वारा एक चलते-फिरते सप्राण रूप में अंकित किया जाता है।

नाटक मे फैले हुए जीवन व्यापार को ऐसी व्यवस्था के साथ रखते है कि अधिक मे अधिक प्रभाव उत्पन्न हो सके। नाटक का प्रमुख उपादान है उसकी रंगमंचीयता।

हिन्दी साहित्य मे नाटकों का विकास वास्तव मे आधुनिक काल मे भारतेंदु युग मे हुआ। भारतेंदु युग से पूर्व भी कुछ नाटक पौराणिक, राजनैतिक, सामाजिक, आदि विषयों को लेकर रचे गए। सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी मे रचे गए नाटकों मे मुख्य है-- हृदयरामकृत- हनुमन्नाटक, बनारसीदास- समयसार आदि।

हिन्दी नाटक का विकास क्रम {natak ka vikas}

1. भारतेन्दु युगीन नाटक 1850 से 1900 ई.

Scanned with OKEN Scanner

हिन्दी नाटकों का आरंभ भारतेंदु हरिश्चन्द्र से ही होता है। भारतेंदु हिन्दी साहित्य में आधुनिकता के प्रवर्तक साहित्यकार है। भारतेंदु और उनके समकालीन लेखकों में देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक दुर्दशा के प्रति गहरी पीड़ा थी और इस पीड़ा के मूल में था देश प्रेम। इसलिए इनके साहित्य में समाज को जागृत करने का संकल्प है और नई विषय वस्तु के रूप में देश प्रेम का भाव मुखर है। समाज को जागृत करने में नाटक की प्रमुख भूमिका है। निराशा से आशा की ओर ले जाने का कार्य भारतेंदु जी ने नाटकों के माध्यम से किया। भारतेंदु जी ने काफी संख्या में मौलिक नाटक लिखे और बंगला तथा संस्कृत नाटकों का अनुवाद भी किया।

2. द्विवेदी युगीन नाटक 1901 से 1920

पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी का खड़ी बोली गद्य के विकास में अमूल्य योगदान है। इस काल में विभिन्न भाषाओं के नाटकों का अनुवाद बड़े पैमाने पर हुआ। बंगला, अंग्रेजी, संस्कृत नाटकों के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन हुआ।

मौलिक नाटककारों में किशोरीलाल गोस्वामी, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध" शिवनंदन सहाय, रायदेवी प्रसाद पूर्ण के नाम उल्लेखनीय है।

3. प्रसाद युगीन नाटक 1921 से 1936

नाट्य रचना में व्याप्त गतिरोध को समाप्त करने वाले व्यक्तित्व के रूप में जयशंकर प्रसाद जी का आगमन हुआ। प्रसाद जी के नाटकों में संस्कृतिक चेतना का विकासमान रूप देखने को मिलता है। इसमें इतिहास और कल्पना के संगम से वर्तमान को नई दिशा देने का प्रयास ही महत्वपूर्ण है। वास्तव में इस काल में ऐतिहासिक नाटकों की धूम रही। जयशंकर प्रसाद जी के अतिरिक्त हरिकृष्ण प्रेमी, गोविन्द, वल्लभ पंत, सेठ गोविन्ददास आदि ने ऐतिहासिक नाटक लिखे।

4. प्रसादोत्तर युगीन नाटक 1937 से अभी तक

प्रसादोत्तर युगीन नाटकों में यथार्थ का स्वर प्रमुख है। स्वाधीनता प्राप्ति का लक्ष्य पुनरूत्थान एवं पुनर्जागरण के रूप में नाटकों में व्यक्त हुआ। आदर्शवादी प्रवृत्तियों प्रसादोत्तर काल का संगम इस काल को नयी दिशा की ओर उन्मुख करता है। प्रसाद

Scanned with OKEN Scanner

युगीन नाटकों मे रोमांटिक भावबोध, सांस्कृतिक चेतना, समसामयिक जीवनसंदर्भों के मध्य एक खामी के रूप मे था। प्रसादोत्तर युगीन नाटकों मे उपेन्द्रनाथ "अश्क" पहले नाटकार थे जिन्होंने हिन्दी नाटकों को रोमांटिक भावबोध से बाहर निकालकर आधुनिक भावबोध से जोड़ा।

नाटक के तत्व

पश्चात्य विद्वानों के मतानुसार नाटक के प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं---

1. कथावस्तु
2. पात्र चरित्र-चित्रण
3. संवाद या कथोपकथन
4. भाषा-शैली
5. देशकाल और वातावरण
6. उद्देश्य
7. संकलनत्रय
8. रंगमंचीयता

भारतीय विद्वानों के अनुसार नाटक के तत्व इस प्रकार है---

1. कथावस्तु
2. नेता (नायक)
3. अभिनय
4. रस
5. वृत्ति

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

[11:25 AM, 12/15/2023] Bansode K. D: नाटक के तत्व – कथावस्तु पात्र संवाद भाषा शैली उद्देश्य अभिनय

नाटक के तत्व – नाटक साहित्य की प्राचीनतम विधा है। नाटक का अभिनय रंगमंच पर होता है, उसे देखने से दर्शक के हृदय में यथा भाव जाग्रत होते हैं, इसलिए इसे संस्कृत में दृश्य काव्य की संज्ञा दी गई है। परन्तु यहाँ हमें नाटक को साहित्य की विधा के रूप में देखना है न कि रंगमंचीय कला के रूप में। अतः उसे दृश्य काव्य कहना उचित नहीं। संस्कृत में तो नाटक पद्य और गद्य-पद्य दोनों में लिखे गए हैं।

लेकिन हिन्दी के नाटककार या तो पद्य का प्रयोग करते ही नहीं हैं और यदि करते भी हैं तो बहुत कम। इस प्रकार हिन्दी में नाटक गद्य की एक विधा के रूप में विकसित हो रहा है। ये नाटक अनेक रूपों में लिखे जा रहे हैं; जैसे-नाटक, एकांकी, प्रहसन और रूपका। संस्कृत आचार्यों ने नाटक की परिभाषा प्रायः अभिनय को केन्द्र मानकर दी है।

नाटक

आचार्य धनन्जय ने किसी भी अवस्था के अनुकरण को नाटक कहा है ('अवस्थानुकृतिर्नाट्यम' धनन्जय)। परन्तु यह परिभाषा तो उसी समय मान्य हो सकती है जब नाटक का अभिनय किया जाए। यहाँ उसकी व्याख्या साहित्य की विधा रूप में की जानी चाहिए। नाटक में किसी पौराणिक, ऐतिहासिक अथवा काल्पनिक घटना को उसके वास्तविक रूप में चित्रित किया जाता है। इसमें यथा दृश्य आदि का वर्णन होता है और घटना से सम्बन्धित पात्र उसी रूप में बातचीत करते, सुख-दुःखादि की अनुभूति करते और क्रिया करते हुए प्रस्तुत किए जाते हैं जिस रूप में वास्तविक पात्र वास्तविक घटना में यह सब कार्य करते हैं। इसलिए यदि हम नाटक को परिभाषा में बाँधना चाहें तो यह कह सकते हैं कि

नाटक मानव जीवन की किसी पौराणिक, ऐतिहासिक अथवा काल्पनिक घटना की शाब्दिक, परन्तु जीवन्त अभिव्यक्ति है।

Scanned with OKEN Scanner

अल्पविकसित देश परिभाषा

नाटक के तत्व

नाटक का महत्व

नाटक मानव के लिए बड़ी उपयोगी वस्तु है। साहित्य की विधा के रूप में इनका अध्ययन करने में आनन्द प्राप्ति के साथ-साथ मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियों का ज्ञान होता है और उससे अनायास कुछ शिक्षाएँ भी प्राप्त होती हैं। जब उसका अभिनय रंगमंच पर किया जाता है तो उसकी यह उपयोगिता और बढ़ जाती है। इससे शिक्षित और अशिक्षित सभी दर्शकों का मनोरंजन होता है। मनोरंजन के साथ-साथ उन्हें हितकारी उपदेश भी मिलते हैं।

नाट्याचार्य भरत मुनि का तो यहाँ तक कहना है कि ऐसा कोई ज्ञान, योग, विद्या, कला और शिल्प नहीं है जिसे नाटक के माध्यम से प्रस्तुत न किया जा सके। हमारे पूर्वज नाटक की इस उपयोगिता को समझते थे। उन्होंने नाट्यकला को उसके उच्च शिखर तक पहुँचा दिया था। उस समय के नाटक और नाट्यशालाएँ इस बात का प्रमाण हैं। लेकिन दुर्भाग्य से हिन्दू शासन के अन्त के साथ-साथ इस कला का भी अन्त-सा हो गया था। अंग्रेजी शासन काल में पुनः जागृति हुई। हिन्दी के क्षेत्र में बाबू हरिश्चन्द्र और बंगाली के क्षेत्र में रविन्द्रनाथ टैगोर के प्रयास प्रशंसनीय हैं।

रविन्द्रनाथ कला-प्रिय व्यक्ति थे। उन्होंने इस बात को समझा कि प्रत्येक व्यक्ति में अभिव्यक्ति की स्वाभाविक शक्ति होती है जिसका विकास अवश्य करना चाहिए। इस अभिव्यक्ति का विकास करने के लिए अभिनय कला विशेष सहायक होती है, अतः शिक्षा के क्षेत्र में उसकी शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। उन्होंने शान्तिनिकेतन में स्थित 'विश्व-भारती' में संगीत, नृत्य एवं अभिनय कला को स्थान दिया। आज के शिक्षा-विशारद नाटक की इस उपयोगिता को स्वीकार करते हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि दृश्य-श्रव्य शिक्षण प्रणाली शिक्षण की उपयुक्तम प्रणाली है।

हमारे देश में प्राचीन काल में नाट्यशालाएँ शिक्षा प्रसार की मुख्य केन्द्र थीं। आज भी वैसे ही प्रयत्न किए जा रहे हैं। पश्चिमी देशों ने भी नाटक के महत्त्व को समझा है।

Scanned with OKEN Scanner

हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकासP

भारतेन्दु युग में ही हिंदी उपन्यास-लेखन की परम्परा का श्रीगणेश हुआ। तब से बराबर उन्नति करती हुई उपन्यास विधा सम tvकालीन हिन्दी साहित्य की महत्वपूर्ण गद्य -विद्या के रूप में प्रतिष्ठित है। भारतेन्दु से लेकर आज तक के हिन्दी उपन्यास के समूचे विकास को विवेचन की सुविधा के लिए निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जाता है:

(क) आरंभिक हिन्दी उपन्यास या प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास

(ख) प्रेमचंदयुगीन हिन्दी उपन्यास

(ग) प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यास

(घ) स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास

(ङ) समकालीन हिन्दी उपन्यास

(क) आरंभिक हिन्दी उपन्यास या प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

आरंभिक हिन्दी उपन्यास या प्रेमचंदपूर्व हिन्दी उपन्यास का समय सन् 1877 से 1918 ई. तक माना जा सकता है। सन् 1977 में श्रद्धाराम फुल्लौरी ने 'भाग्यवती' नामक सामाजिक उपन्यास लिखा था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस उपन्यास की काफी प्रशंसा की थी। यह भले ही अंग्रेजी ढंग का मौलिक उपन्यास न हो किन्तु विषयवस्तु की नवीनता के आधार पर इसे हिन्दी का प्रथम आधुनिक उपन्यास कहा जाता है। इसमें तत्कालीन हिन्दु समाज की अनेक कुरीतियों का आलोचनात्मक एवं यथार्थवादी रीति से चित्रण हुआ है और स्त्रियों के लिए अनेक सदुपदेश दिए गए हैं। 1918 ई. में प्रेमचंद का 'सेवासदन' प्रकाशित हुआ। यहीं से हिन्दी उपन्यास की दिशा और गति में ऐसा परिवर्तन आ जाता है कि प्रेमचन्द और उनके समय के उपन्यासों को प्रेमचंद-पूर्व उपन्यासों से अलग करके समझना आवश्यक हो जाता है।

19वीं शताब्दी के आठवें दशक में लिखी गई शिक्षाप्रद पुस्तकों को कथातमकता के बावजूद उपन्यास की कोटी में नहीं रखा जा सकता है। पं. गौरीदत्त की रचना 'देवरानी जेठानी' भी एक शिक्षा-प्रधान उपदेशात्मक रचना है। दरअसल लाला श्रीनिवास दास का अंग्रेजी ढंग का नावेल 'परीक्षा गुरु' और श्रद्धाराम फुल्लौरी का 'भाग्यवती' ही हिन्दी के अभिन्न उपन्यासों के रूप में रेखांकित किये जा सकते हैं। भाग्यवती' की रचना सन् 1877 में और 'परीक्षा गुरु' का प्रकाशन सन् 1882 में हुआ था। 'भाग्यवती' उपन्यास का प्रकाशन उसके रचना-काल के दस वर्ष बाद सन् 1887 में हुआ। प्रेमचंदपूर्व लिखे गए मौलिक उपन्यासों को पाँच श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है- (i) सामाजिक उपन्यास, (ii) ऐयारी-तिलिस्मी उपन्यास, (iii) जासूसी उपन्यास, (iv) ऐतिहासिक उपन्यास, (v) भावप्रधान उपन्यास।

(i) सामाजिक उपन्यास

विवेच्य काल राष्ट्रीय एवं सामाजिक चेतना की दृष्टि से जागृति एवं सुधार का काल रहा है। सामाजिक समस्याओं और परिस्थितियों को केन्द्र में रखकर साहित्य रचना करने वाले दो प्रकार के साहित्यकार थे- एक वर्ग तो नवीन शिक्षा, ज्ञान-विज्ञान, सुधार आन्दोलन के प्रकाश में धार्मिक बाह्याडम्बरों एवं सामाजिक

Scanned with OKEN Scanner

विकृतियों को समाप्त करके अपनी प्राचीन संस्कृति की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट करना चाहता था, दूसरे वर्ग का लेखक सनातनी परम्परा से जुड़ा हुआ था। वह आर्य समाज आदि के द्वारा किये जाने वाले सुधारों का विरोधी था। पहले वर्ग के लेखकों में श्रद्धाराम फुल्लौरी, लाला श्रीनिवास दास, बालकृष्ण भट्ट तथा लज्जाराम मेहता और दूसरे वर्ग के लेखकों में गोपालराम गहमरी और किशोरी लाल गोस्वामी के नाम उल्लेखनीय हैं। इन दोनों वर्गों के लेखकों ने अधिकतर नीति-उपदेश-प्रधान उपन्यासों की ही रचना की। इनके उपन्यासों के विषय हैं- आदर्श विद्यार्थी, आदर्श हिन्दू, आदर्श गृहिणी, चरित्र–बल, सत्य-निष्ठा आदि का महत्त्व तथा जुआ, मद्यपान, कुसंगति आदि से होने वाली हानियाँ और उनका निवारण। लाला श्रीनिवास दास (परिक्षा गुरु), बालकृष्ण भट्ट (नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान एक सुजान) लोचन प्रसाद पाण्डेय (दो मित्र), लज्जाराम शर्मा (आदर्श दम्पत्ति, बिगड़े का सुधार), गोपालराम गहमरी (नये बाबू, डबल बीवी, सास-पतोह) आदि के उपन्यास उपर्युक्त प्रवृत्तियों की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं।

इन सामाजिक उपन्यासों के बीच प्रेम-रोमांस वाले ऐसे उपन्यासों की भी रचना हुई है जिनमें रीतिकालीन नायिका-भेद वाले विलासात्मक प्रेम को प्रधानता दी गई है, कुछ उपन्यासों में शोखी, शरारत और चुहल भी दिखाई पड़ती है। 'अँगूठी का नगीना' (किशोरीलाल गोस्वामी), 'प्रणयी माधव' (मोटेश्वर पोतदार), शीला (हरिप्रसाद जिंजल), "शयामा स्वप्न' (ठाकुर जगमोहन सिंह) आदि प्रेम प्रधान उपन्यास है।

इस युग के सबसे महत्त्वपूर्ण उपन्यासकार हैं किशोरीलाल गोस्वामी, जिन्होंने लगभग 65 उपन्यासों की रचना की है। इनके विचार सनातन हिन्दू धर्म के अनुकूल है। इनके सामाजिक उपन्यासों में "त्रिवेणी व सौभाग्य श्रेणी', 'लीलावती व आदर्श सती', 'राजकुमारी', 'चपला व नव्य समाज' आदि उल्लेखनीय हैं। गोस्वामी जी के प्रायः सभी उपन्यास स्त्रीपात्र–प्रधान हैं और उनमें प्रेम के विविध रूपों का चित्रण हुआ है। उन्होंने यदि एक ओर सती-साध्वी देवियों के आदर्श प्रेम का चित्रण किया है तो दूसरी ओर साली-बहनोई के अवैध-प्रेम, विधवाओं के व्यभिचार,

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

वेश्याओं के कुत्सित जीवन आदि का भी सजीव वर्णन किया है। बनते हुए नए समाज को इन्होंने संदेह की नजर से देखा है।

(ii) तिलस्मी-ऐयारी उपन्यास

हिन्दी उपन्यास युग -जीवन के चित्र की जिस प्रवृत्ति को लेकर आरम्भ हुआ था यदि परवर्ती लेखकों ने उस परम्परा का अनुगमन किया होता तो यथार्थपरक समाज-चित्रण की कला प्रेमचंद के पहले ही प्रौढ़ता प्राप्त कर लेती, किन्तु देवकीनन्दन खत्री के 'चन्द्रकान्ता' उपन्यास के प्रकाश में आते ही चमत्कारपूर्ण घटना-प्रधान उपन्यासों की ऐसी धूम मची कि कुछ काल के लिए सामाजिक यथार्थ का चित्रण करने वाली प्रवृत्ति की गति मन्द पड़ गयी।

देवकीनन्दन खत्री पर उर्दू की दास्तान–परम्परा का प्रभाव है। उन्होंने 'तिलस्में होशरूबा' से लेकर 'चन्द्रकान्ता', 'चन्द्रकान्ता संतति', 'भूतनाथ', 'नरेन्द्र मोहिनी', 'वीरेन्द्र वीर', 'कुसुम कुमारी' जैसे रहस्य-रोमांच से परिपूर्ण उपन्यासों की रचना की और हिन्दी में एक नया पाठक-समाज तैयार किया- ऐसा पाठक-समाज भी बनाया जो हिन्दी जानता था। उनके उपन्यासों को पढ़ने के लिए असंख्य लोगों ने हिन्दी सीखी और देवनागरी लिपि का ज्ञान प्राप्त किया। खत्री जी के उपन्यासों का संसार तिलस्मी एवं ऐयारी से भरपूर उर्दू दास्तानों और प्राचीन भारतीय कथाओं के राजकुमार राजकुमारियों की प्रेम-कथाओं से निर्मित ऐसा संसार है जिसमें सब कुछ अतार्कि, जादुई और चमत्कारपूर्ण है। 'ऐयार' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है तीव्रगामी या चपल व्यक्ति। देवकीनन्दन खत्री के अनुसार "ऐयार उसको कहते हैं जो हर एक फन जानता हो। शक्ल बदलना और दौड़ना उसका मुख्य कार्य है।' खत्री जी के उपन्यासों में इन्हीं करामात ऐयारों की करामात का रहस्य-रोमांच भरा ऐसा आख्यान है जिसको पढ़ने वाला व्यक्ति अलग-विस्मृति की हद पहुँचकर इनके मनोरंजनपूर्ण संसार में लीन हो जाता है कि वहाँ निकलना उसे प्रीतिकर नहीं लगता। माताप्रसाद गुप्त के अनुसार अतिप्राकृत भावना के आधार पर लिखे गये इन उपन्यासों की लोकप्रियता के लिए मध्ययुगीन विकृत रुचि ही उत्तरदायी है। जो भी हो, इतना अवश्य है कि हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में इन रचनाओं का बहुत बड़ा योगदान है। खत्री के अतिरिक्त हरेकृष्ण जोहर ने 'कुसुमलता', 'भयानक भ्रम', 'नारी

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

पिशाच', 'मयंक मोहिनी का माया महल', 'भयानक खून' आदि ऐयारी उपन्यासों की रचना की। किशोरी लाल ने भी 'शीशमहल' नामक उपन्यास लिखा। इन लेखकों को खत्री जैसी लोकप्रियता नहीं मिली।

(iii) जासूसी उपन्यास

तिलस्मी ऐयारी उपन्यासों की लोकप्रियता ने गोपाल राम गहमरी को शिघ्र ढंग से प्रसिद्ध होने के लिए जासूसी उपन्यासों की रचना में प्रवृत्त होने का अवसर प्रदान किया। जासूसी उपन्यास पूर्णतः योरोप-विशेषतः इंग्लैंड की देन है। 19वीं शती में सर आर्थर कानन डायल के जासूसी उपन्यास बहुत लोकप्रिय हुए थे। उनके प्रभावस्वरूप बंगला में और बाद में हिन्दी में जासूसी उपन्यास लिखे गए। गोपाल राम गहमरी ने सन् 1900 ई. 'जासूस' नामक मासिक पत्र निकाला। इसी में इनके जासूसी उपन्यास प्रकाशित हुए जिनकी संख्या लगभग 200 है। 'अद्भुत लाश', 'गुसचर', 'बेकसूर को फाँसी', 'खुनी कौन', 'बेगुनाह का खुन', 'जासूस की चोरी', 'अद्भुत खून', 'डाके पर डाका', 'जादुगरनी मनोला', 'खुनी का भेद', 'खूनी की खोज', 'किले में खून' आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं जिनमें चोरी, डकैती, हत्या, ठगी आदि से संबंधित कोई भयंकर काण्ड हो जाता है और जासूस उसके सुराग में लग जाता है।

फिर क्रमशः कथानक एक रहस्य से दूसरे रहस्य में उलझता हुआ घटनाओं के वातचक्र में तब फँसा रहता है जब तक जासूस अपने धैर्य, साहस, बल, बुद्धि और कौशल से उसका रहस्य भेदन नहीं कर लेता। जासूसी उपन्यास की घटनाएँ जीवन की यथार्थ स्थिति के निकट होती हैं। कल्पना से उसमें रहस्य की सृष्टि होती है और इस तरह कथानक जटिल और पेचीदा हो जाती है। इस तरह के उपन्यासों में भी मनोरंजन, कुतुहल, कौतुक का समावेश रहता है किन्तु सत्य का उद्घाटन नैतिकता के स्थान और आदर्शवादी दृष्टि का पोषण भी इनका उद्देश्य रहा है।

गोपाल राम गहमरी के अतिरिक्त रामलाल वर्मा (चालाक चोर), किशोरी लाल गोस्वामी (जिन्दे की लाश), जयराम दास गुप्त (लंगड़ खूनी) ने भी जासूसी

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

पिशाच', 'मयंक मोहिनी का माया महल', 'भयानक खुन' आदि ऐयारी उपन्यासों की रचना की। किशोरी लाल ने भी 'शीशमहल' नामक उपन्यास लिखा। इन लेखकों को खत्री जैसी लोकप्रियता नहीं मिली।

(iii) जासूसी उपन्यास

तिलस्मी ऐयारी उपन्यासों की लोकप्रियता ने गोपाल राम गहमरी को भिन्न ढंग से प्रसिद्ध होने के लिए जासूसी उपन्यासों की रचना में प्रवृत्त होने का अवसर प्रदान किया। जासूसी उपन्यास पूर्णतः योरोप-विशेषतः इंग्लैंड की देन है। 19वीं शती में सर आर्थर कानन डायल के जासूसी उपन्यास बहुत लोकप्रिय हुए थे। उनके प्रभावस्वरूप बंगला में और बाद में हिन्दी में जासूसी उपन्यास लिखे गए। गोपाल राम गहमरी ने सन् 1900 ई. 'जासूस' नामक मासिक पत्र निकाला। इसी में इनके जासूसी उपन्यास प्रकाशित हुए जिनकी संख्या लगभग 200 है। 'अद्‌भुत लाश', 'गुप्तचर', 'बेकसूर को फाँसी', 'खुनी कौन', 'बेगुनाह का खुन', 'जासूस की चोरी', 'अद्‌भुत खून', 'डाके पर डाका', 'जादुगरनी मनोला', 'खुनी का भेद', 'खूनी की खोज', 'किले में खून' आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं जिनमें चोरी, डकैती, हत्या, ठगी आदि से संबंधित कोई भयंकर काण्ड हो जाता है और जासूस उसके सुराग में लग जाता है।

फिर क्रमशः कथानक एक रहस्य से दूसरे रहस्य में उलझता हुआ घटनाओं के वातचक्र में तब फँसा रहता है जब तक जासूस अपने धैर्य, साहस, बल, बुद्धि और कौशल से उसका रहस्य भेदन नहीं कर लेता। जासूसी उपन्यास की घटनाएँ जीवन की यथार्थ स्थिति के निकट होती हैं। कल्पना से उसमें रहस्य की सृष्टि होती है और इस तरह कथानक जटिल और पेचीदा हो जाती है। इस तरह के उपन्यासों में भी मनोरंजन, कुतुहल, कौतुक का समावेश रहता है किन्तु सत्य का उद्घाटन नैतिकता के स्थान और आदर्शवादी दृष्टि का पोषण भी इनका उद्देश्य रहा है।

गोपाल राम गहमरी के अतिरिक्त रामलाल वर्मा (चालाक चोर), किशोरी लाल गोस्वामी (जिन्दे की लाश), जयराम दास गुप्त (लंगड़ खूनी) ने भी जासूसी

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

उपन्यासों की रचना की रचना की किन्तु गहमरी के अतिरिक्त किसी को विशेष ख्याति नहीं मिली।

(iv) ऐतिहासिक उपन्यास

इस युग में मध्यकालीन भारत के मुगल शासन से संबंधित ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर अनेक उपन्यास लिखे गये। किशोरीलाल गोस्वामी ने ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना में विशेष रुचि दिखाई है। 'तारा या क्षात्रकुल कमलिनी', 'कनक कुसुम वा मस्तानी', 'सुल्ताना रजिया बेगम वा रंगमहल में हलाहल', 'लखनऊ की कब्र या शाही महलसरा', 'सोना, सुगन्ध वा पद्मावाई' आदि उनके प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास हैं। इनके अतिरिक्त गंगा प्रसाद (नूरजहाँ, वीर पत्नी, कुमार सिंह सेनापति, हम्मीर), जयरामदास गुप्त (काश्मीर पतन, रंग में भंग, मायारानी, मल्का चाँद बीबी), मथुरा प्रसाद शर्मा (नूरजहाँ बेगम), ब्रजनन्दन सहाय (लाल चीन) आदि ने भी ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं का चित्रण हुआ है, किन्तु इन्हें सच्चे अर्थों में ऐतिहासिक उपन्यास नहीं कहा जा सकता है क्योंकि एक तो इनमें ऐतिहासिक वातावरण का अभाव है, दूसरे ऐतिहासिक घटनाओं और तत्कालीन रीति-नीति, आचार-विचार वेश-भूषा आदि का वर्णन में कालदोष विद्यमान है। दरअसल लेखकों की प्रवृत्ति इतिहास की ओर से हटकर प्रणय-कथाओं, विलास लिलाओं, रहस्यमय प्रसंगों और कुतुहल पूर्ण घटनाओं की कल्पना में अधिक लीन रही है। ऐतिहासिक छानबीन कम की, कल्पना से अधिक काम लिया ऐसा प्रतीत होता है कि तिलिस्मी-ऐयारी और जासूसी उपन्यासों के अतिशय रहस्य-रोमांच के समानांतर अपनी प्रेमकथाओं को प्रमाणिक रूप में प्रस्तुत करने के लिए इन रचनाकारों ने इतिहास का सहारा ले लिया। इन्हें ऐतिहासिक रोमांस की कथाएँ कहना अधिक समीचीन है।

(v) भावप्रधान उपन्यास

इस युग में कुछ ऐसे भी उपन्यास लिखे गए जिनमें न घटना की प्रधानता है, न चरित्र की। इनमें भावतत्त्व की प्रधानता है जैसे ठाकुर जगमोहन सिंह का 'श्यामा स्वप्न', बजनन्दन सहाय के 'सौन्दर्योपासक', 'राधाकांत', 'राजेन्द्र मालती' आदि

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

उपन्यास। इन उपन्यासों में कथा-तत्त्व सर्वथा क्षीण है। आचार्य शुक्ल ने इन्हें 'काव्यकोटि में आने वाले भावप्रधान उपन्यास' कहा है। घटना-परिस्थिति की क्षीणता के कारण इन उपन्यासों में कोई गति भी प्रायः नहीं है।

(ख) प्रेमचन्द युगीन हिन्दी उपन्यास

प्रेमचंद का 'सेवासदन' उपन्यास सन् 1918 में प्रकाशित हुआ। इसी उपन्यास के प्रकाशन के साथ हिन्दी उपन्यास के नये युग का आरंभ होता है जिसे "प्रेमचंद युग' और हिन्दी उपन्यास के विकास युग के नाम से जाना जाता है। इस युग की समय-सीमा सन् 1918 से 1936 ई. तक मानी जा सकती है क्योंकि इसी अवधि में प्रेमचंद का उपन्यास-लेखन सम्पन्न हुआ। अ और इसी समय सीमा में प्रेमचंद से प्रेरित-प्रभावित अनेक उपन्यासकारों ने अपनी रचनात्मक प्रतिभा प्रदर्शित की।

सन् 1918 से 1936 ई. तक का समय भारतीय स्वाधीनता संघर्ष और समाज सुधार संबंधी आंदोलनों की दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अंग्रेजी शासन, शिक्षा एवं सभ्यता के प्रभाव से तथा हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों, मत-मतान्तरों एवं धार्मिक आडम्बरों के प्रति बौद्धिक विद्रोह से, हमारे भीतर अपने धर्म, शिक्षा, संस्कृति एवं आचार-विचार विषयक जो हीनता आ गई थी उसके उन्मूलन के लिए चले आ रहे प्रयासों के फलस्वरूप हिन्दू समाज में एक नवीन चेतना और गौरव की भावना का उदय हो रहा था। महात्मा गाँधी भारतीय राजनीतिक मंच पर सूर्य की तरह उदित हो रहे थे। उनके सत्य, अहिंसा, सदाचार, सत्याग्रह, अस्पृश्यता विरोध, स्त्रियों की उन्नति ग्राम सुधार, अछूतोद्धार, स्वदेशी आदि से संबंधित विचारधारा का जनता पर व्यापक प्रभाव पड़ने लगा था। अन्याय-उत्पीड़न के खिलाफ विरोध की नई शक्ति का उदय, उत्पीड़क समाज, सामन्त वर्ग, सरकारी अधिकारी, पूँजीपति आदि से टक्कर लेने का साहस, रूस की नवजागृति, विज्ञान के अभूतपूर्व आविष्कार आदि का हमारे जन-जागरण पर जो प्रभाव पड़ा उससे समाज यथार्थोन्मुख और वर्गीय समझ से भी सम्पन्न हुआ। अतः कल्पना, रोमांच एवं चमत्कार-प्रदर्शन के इन्द्रजाल से मुक्ति लेकर हिन्दी उपन्यासकार यथार्थ की कठोरभूमि पर खड़े होकर समाजोपयोगी साहित्य की रचना में प्रवृत्त हुआ। इस नयी रचना-दृष्टि के संवाहक थे मुंशी प्रेमचन्द जिन्होंने

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

पहले के उपन्यासकारों पर यह मार्मिक टिप्पणी की थी- "जिन्हें जगत् गति नहीं व्यापती, वे जासूसी, तिलस्मी चीजें लिखा करते हैं। यह कहकर प्रेमचन्द ने अपना प्रस्थान भेद और रचना संबंधी दृष्टिकोण स्पष्ट कर दिया था। प्रेमचंद ने अपने समय के सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ को अपने अनेक उपन्यासों में बड़ी गंभीरता एवं मार्मिकता के साथ चित्रित किया है। 'सेवासदन', 'प्रेमाश्रम', 'निर्मला', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'गबन', 'कर्मभूमि', 'गोदान' और 'मंगलसूत्र' जैसे उपन्यासों में प्रेमचंद ने हिंदी भाषी जनता का मानसिक संस्कार किया है और युगीन सामाजिक-राजनीतिक गतिविधि का पूर्ण चित्र भी अंकित किया है। अनेक उपन्यासों में मानवीय आदर्श, कर्तव्य प्रेम, करुणा, समाज-सुधार, देश-भक्ति, सत्याग्रह, अहिंसा, स्त्री-व्यथा, मध्यवर्गीय मनुष्य की त्रासदी, कृषक जीवन की समस्याएँ मेहनतकश जनता का संघर्ष आदि अनेक जीवन-संदर्भों का व्यापक एवं प्रभावोत्पादक चित्रण हुआ है। प्रेमचंद के उपन्यासों में आदर्श और यथार्थवाद का अद्‌भुत मेल है। उनके आरंभिक उपन्यासों में जहाँ आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की अभिव्यक्ति हुई है, वहीं 'गोदान' में उनका आदर्शवाद पूरी तरह बिखर गया है और उसका स्थान ले लिया है क्रूर यथार्थ ने। यहाँ तक आते-आते गाँधी के प्रभाव से हृदय परिवर्तन का भी सिद्धान्त पूरी तरह निष्फल हो गया है।

प्रेमचंद ने जहाँ गाँधीवादी विचारों और आदर्शों से प्रभावित होकर उपन्यास-रचना की, वहीं अपने चिन्तन, जीवनानुभव और ज्ञानार्जन से यथार्थवादी चेतना का भी विकास किया। प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य की एक प्रमुख विशेषता है, दलितों के प्रति सहानुभूति और करुण तथा उनके जीवन संघर्ष की प्रामाणिक एवं मार्मिक अभिव्यक्ति। हिंदी साहित्य में जनचेतना और जनपक्षधरता का इतना बड़ा कोई दूसरा उपन्यासकार नहीं दिखाई पड़ता।

प्रेमचंद युग में ही जयशंकर प्रसाद ने 'कंकाल', 'तितली', 'इरावती' जैसे उपन्यासों से अपनी उपन्यास-कला का भी परिचय दिया। उन्होंने 'कंकाल' में सामाजिक यथार्थ का चित्रण करके यह प्रमाणित कर दिया कि वे अतीत में ही रमे रहने वाले रचनाकार नहीं थे, वरन् उन्हें अपने समय के सामाजिक यथार्थ की भी गहरी जानकारी थी। इसी समय निराला ने 'अप्सरा', 'प्रभावती', 'निरूपमा', 'चोटी

Scanned with OKEN Scanner

की पकड़', 'बिल्लेसुर बकरिहा', 'कुल्लीभाट' जैसे उपन्यासों ने प्रेमचंदयुगीन सामाजिक चेतना को एक नया आयाम दिया। 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' हास्य-व्यंग्य की सरसता और तीक्ष्णता से युक्त ऐसे उपन्यास हैं जिनसे निराला की प्रगतिशील चेतना शाखी, वृन्दावन लाल वर्मा, इलाचन्द्र जोशी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' आदि ने भी प्रेमचंदयुग में ही लिखना आरंभ किया। इनकी प्रवृत्ति, दृष्टि और शैली उस युग से भिन्नता लिए हुए हैं और इनकी कला का निखार भी प्रेमचंदोत्तर काल में ही दिखाई पड़ा अतः इनकी उपलब्धियों का मूल्यांकन प्रेमचंदोत्तर काल में ही करना अधिक समीचीन है।

(ग) प्रेमचंदोत्तर उपन्यास

प्रेमचंदोत्तर उपन्यास को ऐतिहासिक दृष्टि से दो वर्गों में रखा जा सकता है। प्रथम वर्ग प्रेमचंद के निधन (सन् 1936 ई.) के बाद से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति (सन् 1947) तक के उपन्यासों और दूसरे वर्ग में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आज तक के उपन्यासों का अध्ययन-मूल्यांकन किया जा सकता है। पहले स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व के उपन्यासों पर चर्चा करते हैं।

प्रेमचंद के निधन के बाद हिन्दी उपन्यास में अनेक प्रवृत्तियों का विकास हुआ जैसे सामाजिक एवं मानवतावादी, स्वच्छंदतावादी, प्रकृतवादी, मनोविश्लेषणवादी, सामाजिक यथार्थवादी और ऐतिहासिक-पौराणिक। सामाजिक एवं मानवतावादी उपन्यास परम्परा मूलत 5 प्रेमचंद की ही परम्परा है। जिसमें सामाजिक यथार्थ के चित्रण और मनुष्य के चतुर्दिक विकास और हित पर विशेष बल दिया गया है। इस परम्परा को समृद्ध करने वाले उपन्यासकार है- 'विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक', "सियाराम शरण गुप्त', 'प्रतापनारायण श्रीवास्तव', 'अमृतलाल नागर', 'विष्णु प्रभाकर', 'उदयशंकर भट्ट' । प्रेमचंद-युग में गांधीवादी विचारधारा की प्रमुखता रही है। जिसमें मानवतावाद की व्यापक प्रतिष्ठा भी हुई है। सियाराम शरण गुप्त, प्रतापनारायण श्रीवास्तव जैसे लेखकों पर गांधीवाद का गहरा प्रभाव रहा है। सियाराम शरण गुप्त के 'गोद', 'अंतिम इच्छा' और 'नारी' में प्रतापनारायण श्रीवास्तव के 'विजय', 'विकास', 'बयालीस' और 'विसर्जन' जैसे उपन्यासों में गांधीवादी विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। वे आध्यात्मिक स्तर पर

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

गांधीवादी, हृदय परिवर्तन और आत्मपीड़न के सिद्धान्त को मान्यता देते हैं। स्वच्छंदतावादी उपन्यासों की रचना में वृन्दावन लाल शर्मा (गढ़ कुण्डार, विराट का पद्मिनी), जयशंकर प्रसाद (तितली), निराला (अप्सरा, अलका, प्रभावती), भगवती चरण वर्मा (तीन वर्ष, चित्रलेखा) और उषादेवी मित्रा (पिया) का योगदान उल्लेखनीय है। हालाँकि प्रेमचंदोत्तर काल में स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति का ह्रास हो गया था लेकिन यह ऐसी प्रवृत्ति है जो कभी मर नहीं सकती।

प्रेमचंद-युग में ही प्रकृतवादी उपन्यासों की परम्परा का सूत्रपात हो गया था। प्रकृतवाद अपने में एक विशिष्ट जीवन-दर्शन है जो मानव-जीवन को वैज्ञानिक दृष्टि से प्रकृत रूप में (नेचुरल) देखने और चित्रित करने में विश्वास रखता है। इस दृष्टि के अनुसार जीवन में जिसे विद्रुप और कुत्सित कहा जाता है, वह सहज और वैज्ञानिक भी है। चतुरसेन शास्त्री (हृदय की परख, व्यभिचार, अमर, आत्मदाह), पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' (दिल्ली का दलाल, चाकलेट, बुधुआ की बेटी, शराबी, सरकार तुम्हारी आँखों में) और ऋषभचरण जैन (वैश्यापुत्र, मास्टर साहब, सत्याग्रह, चाँदनी रात, दिल्ली का व्यभिचार) ने हिन्दी में प्रकृतवादी उपन्यासों की रचना की और यथार्थ के नाम पर मानव जीवन की विकृतियों का खुलकर वर्णन-चित्रण किया। प्रकृतवादी उपन्यासों के जनक जोला (ZOLA) की मान्यता है कि लेखकों का धर्म है कि वे जीवन के गंदे और कुरूप से कुरूप चित्र खींचे। हिन्दी के प्रकृतवादी उपन्यासकारों ने इस धारणा के तहत जीवन का ऐसा चित्र प्रस्तुत किया जिसे पढ़कर वितृष्णा पैदा होती है और महसूस होता है कि जीवन में सब कुछ विद्रुप, कुत्सित और वीभत्स है। इस प्रवृत्ति को अधिक प्रश्रय नहीं मिला। प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों में व्यक्तिवादी चेतना का भी प्रधान्य रहा। व्यक्तिवादी व्यक्ति की सत्ता और अस्तित्व को समाज से पहले स्वीकार करता है। उसकी दृष्टि में समाज-व्यवस्था महज एक माध्यम होती है, लक्ष्य व्यक्ति होता है। अपने योग-क्षेम का निर्णायक व्यक्ति होता है। वह अपने प्रति स्वयं उत्तरदायी होता है। उसमें व्यक्ति का अहं प्रबल होता है। भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते), उपेन्द्रनाथ अश्क' (एक रात का नरक, सितारों का खेल, गिरती दीवारें), भगवती प्रसाद वाजपेयी (पतिता की साधना, चलते-चलते, टूटते बंधन) और उषा देवी मित्रा

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

गांधीवादी, हृदय परिवर्तन और आत्मपीड़न के सिद्धान्त को मान्यता देते हैं। स्वच्छंदतावादी उपन्यासों की रचना में वृन्दावन लाल शर्मा (गढ़ कुण्डार, विराट का पद्मिनी), जयशंकर प्रसाद (तितली), निराला (अप्सरा, अलका, प्रभावती), भगवती चरण वर्मा (तीन वर्ष, चित्रलेखा) और उपादेवी मित्रा (पिया) का योगदान उल्लेखनीय है। हालाँकि प्रेमचंदोत्तर काल में स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति का ह्रास हो गया था लेकिन यह ऐसी प्रवृत्ति है जो कभी मर नहीं सकती।

प्रेमचंद-युग में ही प्रकृतवादी उपन्यासों की परम्परा का सूत्रपात हो गया था। प्रकृतवाद अपने में एक विशिष्ट जीवन-दर्शन है जो मानव-जीवन को वैज्ञानिक दृष्टि से प्रकृत रूप में (नेचुरल) देखने और चित्रित करने में विश्वास रखता है। इस दृष्टि के अनुसार जीवन में जिसे विद्रुप और कुत्सित कहा जाता है, वह सहज और वैज्ञानिक भी है। चतुरसेन शास्त्री (हृदय की परख, व्यभिचार, अमर, आत्मदाह), पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' (दिल्ली का दलाल, चाकलेट, बुधुआ की बेटी, शराबी, सरकार तुम्हारी आँखों में) और ऋषभचरण जैन (वैश्यापुत्र, मास्टर साहब, सत्याग्रह, चाँदनी रात, दिल्ली का व्यभिचार) ने हिन्दी में प्रकृतवादी उपन्यासों की रचना की और यथार्थ के नाम पर मानव जीवन की विकृतियों का खुलकर वर्णन-चित्रण किया। प्रकृतवादी उपन्यासों के जनक जोला (ZOLA) की मान्यता है कि लेखकों का धर्म है कि वे जीवन के गंदे और कुरूप से कुरूप चित्र खींचे। हिन्दी के प्रकृतवादी उपन्यासकारों ने इस धारणा के तहत जीवन का ऐसा चित्र प्रस्तुत किया जिसे पढ़कर वितृष्णा पैदा होती है और महसूस होता है कि जीवन में सब कुछ विद्रुप, कुत्सित और वीभत्स है। इस प्रवृत्ति को अधिक प्रश्रय नहीं मिला। प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों में व्यक्तिवादी चेतना का भी प्रधान्य रहा। व्यक्तिवादी व्यक्ति की सत्ता और अस्तित्व को समाज से पहले स्वीकार करता है। उसकी दृष्टि में समाज-व्यवस्था महज एक माध्यम होती है, लक्ष्य व्यक्ति होता है। अपने योग-क्षेम का निर्णायक व्यक्ति होता है। वह अपने प्रति स्वयं उत्तरदायी होता है। इसमें व्यक्ति का अहं प्रबल होता है। भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते), उपेन्द्रनाथ अश्क' (एक रात का नरक, सितारों का खेल, गिरती दीवारें), भगवती प्रसाद वाजपेयी (पतिता की साधना, चलते-चलते, टूटते बंधन) और उपा देवी मित्रा

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

(वचन का मोल, जीवन का मुस्कान, पथचारी) ने व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से उपन्यासों की रचना की है। इन उपन्यासकारों ने सामाजिक शक्तियों के स्थान पर व्यक्ति की चेतना और उसके व्यक्तित्व को अधिक महत्त्वपूर्ण माना है। यहाँ व्यक्ति का विद्रोह भी सामाजिक संदर्भ से रहित व्यक्तिगत ही है।

प्रेमचंद के बाद हिन्दी उपन्यास में मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों की एक ऐसी पंक्ति तैयार हुई जिसने हिन्दी को अनेक श्रेष्ठ उपन्यासों से समृद्ध किया। जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी और अज्ञेय इस परम्परा के अग्रणी रचनाकार हैं। फ्रायड, एडलर और युंग की मनोविश्लेषण-संबंधी मान्यताओं का इन लेखकों पर गहरा प्रभाव है। मनुष्य के अन्तर्जगत की सूक्ष्म एवं गहन पड़ताल करके उसके अन्तःसत्य को उद्घाटित करना इन लेखकों का उद्देश्य है। इन उपन्यासकारों पर फ्रायड के सिद्धान्तों का अधिक प्रभाव है। उसके कुंठावाद के आधार पर लेखकों ने मनुष्य की दमित वासनाओं, कुंठाओं, काम-प्रवृत्तियों, अहं, दंभ और हीनभावना आदि ग्रंथियों का चित्रण करके हिन्दी उपन्यास में व्यक्ति का ऐसा रूप प्रस्तुत किया जिसमें वह अपनी आन्तरिक छवि देख सकता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों ने यह माना कि बाह्य सत्य की अपेक्षा अन्तःसत्य ही प्रामाणिक एवं विश्वसनीय है। अतः उसे ही मानना महत्त्वपूर्ण है। जैनेन्द्र के 'परख', 'सुनीता', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी', इलाचन्द्र जोशी के 'संन्यासी', 'पर्दे की रानी', 'प्रेम और छाया' और अज्ञेय के 'शेखर : एक जीवनी', 'नदी के द्वीप' जैसे उपन्यासों से यह कथा-परम्परा समृद्ध हुई।

सन् 1941 में दो बड़े उपन्यास- अज्ञेय का 'शेखर : एक जीवनी' और यशपाल का 'दादा कामरेड' एक साथ प्रकाशित हुए। इनमें प्रयोग और प्रगति की दो भिन्न जीवन-दृष्टियाँ स्पष्ट रूप में उभरकर सामने आई। अज्ञेय के उपन्यासों में मनोविश्लेषण, विद्रोहमूलक वैयक्तिक आग्रह, व्यक्ति स्वातंत्र्य और अभिनव रूप-विन्यास की प्रधानता थी तो यशपाल के उपन्यास पर मार्क्सवादी विचारधारा और यथार्थवादी शिल्प का गहरा प्रभाव था। वैसे तो प्रेमचंद के परवर्ती लेखन पर मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव दिखाई पड़ने लगा था किन्तु उसको व्यापक प्रतिष्ठा मिली यशपाल आदि समाजवादी-प्रगतिवादी लेखकों के साहित्य में। 'प्रगतिशील लेखक संघ' के प्रथम अधिवेशन के अपने भाषण में प्रेमचंद ने अपने

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

वस्तुवादी दृष्टिकोण और प्रगतिशील सौन्दर्य-दृष्टि को भली-भाँति स्पष्ट कर दिया था। आगे चलकर प्रेमचंद की यथार्थवादी परम्परा का ही अनवरागी विकास हुआ। प्रेमचंद के बाद यशपाल, नागार्जुन, मन्मथनाथ गुप्त, रांगेय राघव आदि उपन्यासकारों ने उस यथार्थवादी परम्परा का समुचित विकास किया।

'दादा कामरेड' के बाद यशपाल के तीन उपन्यास– 'देशद्रोही', 'दिव्या' और 'पार्टी कामरेड' स्वतंत्रता के पहले प्रकाशित हुए और स्वतंत्रता के बाद 'मनुष्य के रूप' और 'झूठा – सच' जैसे वृहदकाय उपन्यास का प्रकाशन हुआ। यशपाल के उपन्यासों में साम्यवादी विचार – दर्शन की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। उन्होंने लेखक और लेखन को सामाजिक उपयोगिता के दर्शन से जोड़ा है। उनका कहना है कि लेखक यदि कलाकार है तो उसके प्रयत्न की सार्थकता समाज के दूसरे श्रमियों की भाँति कुछ उपयोगिता की सृष्टि करने में है। यशपाल के उपन्यासों में प्रमुख रूप से भारतीय स्वाधीनता संघर्ष, समाज-संबद्धता, क्रांति और विद्रोह, प्रगतिशील जीवन मूल्यऔर चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। रांगेय राघव के 'घरौंदे', 'विषाद मठ' और मन्मथनाथ गुप्त के 'शोले', 'मशाल' में भी प्रगतिशील जीवन-दृष्टि की अभिव्यक्ति हुई है। स्वतंत्रता के बाद इस प्रगतिवादी धारा या समाजवादी धारा का ही विकास हुआ।

ऐतिहासिक–पौराणिक उपन्यास लेखकों में वृन्दावन लाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, राहुल सांकृत्यायन, हजारीप्रसाद द्विवेदी के नाम उल्लेखनीय हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में भारतीय इतिहास के उन अध्यायों और घअनाओं को चित्रित किया गया है, जिनमें वर्तमान को नयी दिशा और प्रेरणा मिलती है। ऐसे उपन्यासों का उद्देश्य केवल इतिहास के आलोक में सुधारने और सँवारने की चेतना प्रदान करना है, साथ ही वर्तमान को इतिहास में संगुम्फित करने और नये जीवन-मूल्यों को विश्वसनीय और प्रेरणास्पद बनाकर प्रस्तुत करने की दृष्टि भी क्रियाशील है। ऐतिहासिक उपन्यासकारों में वृन्दावन लाल वर्मा को विशेष ख्याति मिली है। उनके 'गढ़ कुंडार', 'विराट की पद्मिनी', 'झाँसी की रानी' जैसे उपन्यास स्वतंत्रता से पहले और 'कचनार', 'मृगनयनी' 'अहिल्याबाई', 'भुवन विक्रम', 'रामगढ़ की रानी', 'महारानी दुर्गावती' आदि उपन्यास स्वतंत्रता के बाद लिखे गये हैं। वर्मा जी ने अपने

Scanned with OKEN Scanner

इतिहास प्रधान उपन्यासों में मध्यकालीन भारत के दबे – बिखरे शौर्य और गौरव को बड़ी ममता से संजोया है। उनका मानना है कि इतिहास मनुष्य के विकास में सहायक होता है। इस धारणा के तहत उन्होंने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक घटनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का प्रसार किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' लिखकर एक अभिनव प्रयोग किया। बाणभट्ट के बावजूद यह न तो आत्मकथा है, न जीवनी। इसमें हर्षवर्धन कालीन इतिहास, समाज और संस्कृति के साथ-साथ युगबोध को भी अभिव्यक्ति मिली है। यह कथ्य, शिल्प, भाषा, शैली, संचेतना आदि सी दृष्टियों से एक अनूठा उपन्यास है।

(घ) स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के राजनीतिक-सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में व्यापक परिवर्तन उपस्थित हुआ। स्वाधीनता संघर्ष के दौरान जिस व्यापक राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना का अभ्युदय हुआ था, वह धीरे-धीरे हिन्दू मुस्लिम साम्प्रदायिकता की गिरफ्त में आती गई और अंग्रेजों की फूट डालो, राज करो' की नीति सफल होती गई। इसी के परिणामस्वरूप सन् 1947 ई. में अखण्ड भारत के दो खण्ड हो गये – हिन्दुस्तान और पाकिस्तान। भारत-विभाजन के बाद देश में साम्प्रदायिक दंगे हुए। आजाद भारत के निर्माण और विकास के लिए प्रयत्न हुए। तरह-तरह की योजनाएँ बनीं। उद्योग-धंधों, कार्यालयों और अन्य कर्म–क्षेत्रों का विस्तार हुआ। इस परिदृश्य से सामाजिक–राजनीतिक जीवन में उथल-पुथल हुई, परिवर्तन, विघटन और निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। इसके अलावा आजादी के भी जो मीठे-कड़वे अनुभव हासिल हुए, उन सबको केन्द्र में रखकर स्वातंत्र्योत्तर काल के उपन्यासकारों ने महत्त्वपूर्ण उपन्यासों की रचना की। यशपाल का 'झूठा – सच' स्वतंत्रतापूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के यथार्थ को चित्रित करने वाला महाकाव्यात्मक उपन्यास है। यह उपन्यास दो खण्डों में लिखा गया है। पहला खण्ड है— 'वतन और देश' और दूसरा है 'देश का भविष्य'। ये दोनों शीर्षक काफी व्यंजनापूर्ण हैं और आजादी के पूर्व और आजादी के बाद के भारत की संघर्ष-कथा को

LATUR

बड़ी सजीवता के साथ रूपायित करते हैं। इनमें 1942 से 1952 ई. तक के भारत के राजनीतिक-सामाजिक जीवन का यथार्थवादी चित्रण किया गया है।

देश विभाजन के पूर्व और उसके बाद की परिस्थितियों, जीवन-दशाओं, संघर्षों और समस्याओं को चित्रित करने वाले उपन्यासकारों में यशपाल के अतिरिक्त चतुरेसन शास्त्री (धर्मपुत्र), विष्णु प्रभाकर (निशिकांत), मन्मनाथ गुप्त (गृहयुद्ध, तूफान के बादल), भीष्म साहनी (तमस), कमलेश्वर (लौटे हुए मुसाफिर), जगदीश चन्द्र (मुट्ठी भर कंकर), राही मासूम रज़ा (आधा गाँव), बदीउज्जमा (छाको की वापसी), भगवती चरण वर्मा (सीधी सच्ची बातें, प्रश्न और मरीचिका, वह फिर नहीं आई) और कृष्णदेव वैद्य (गुजरा हुआ जमाना) के नाम उल्लेखनीय है। देश विभाजन और उसकी त्रासदी से जुड़े उपन्यासों का यह एक ऐसा कथा- संसार है जो उपन्यासकारों की सामाजिक-सांस्कृतिक चिन्ताओं, समाज संबद्धता और जागरूकता का सही पता देता है। इन उपन्यासों को पढ़कर इस शताब्दी की सबसे बड़ी त्रासदी (देश विभाजन) के अनेक पहलुओं को जानने समझने में सुविधा होती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी पिछली पीढ़ी के व्यक्तिवादी, समाजवादी, मनोवैज्ञानिक और ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना करने वाले उपन्यासकार सक्रिय रहे हैं। सामाजिक एवं मानवतावादी उपन्यासकार अमृतलाल नागर के अनेक महत्त्वपूर्ण उपन्यास स्वतंत्रता के बाद वाले दौर में प्रकाशित हुए। 'बूँद और समुद्र', 'सुहाग के नूपुर', 'शतरंज के मोहरे', 'अमृत और विष', 'बिखरे तिनके', 'नाच्यौ बहुत गोपाल', 'मानस के हंस', 'खंजन नयन' और 'करवट' जैसे उपन्यासों से अमृतलाल नागर को स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा – साहित्य में विशेष प्रतिष्ठा मिली।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के तीन महत्त्वपूर्ण उपन्यास- 'चारुचन्द्रलेख', 'पुनर्नवा' और 'अनामदास का पोथा' स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सातवें और आठवें दशक में प्रकाशित हुए। ये उपन्यास द्विवेदी जी के विशिष्ट रचना–शैली, सांस्कृतिक चेतना, ऐतिहासिक संवेदना और स्वच्छंद-स्वच्छ रोमांटिक भावना के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। हिंदी में इन उपन्यासों की अपनी विशिष्ट पहचान है। भगवती चरण वर्मा के 'भूले बिसरे चित्र', 'सामर्थ्य और सीमा', 'सबहिं नचावत राम गोसाईं', 'सीधी-सच्ची बातें', उपेन्द्रनाथ 'अश्क' के 'गिरती दीवारें', 'गर्म राख', 'शहर में घूमता आईना',

Scanned with OKEN Scanner

'बांधों न नाव इस ठाँव बन्धु' जैसे सामाजिक उपन्यास स्वतंत्रता प्राप्ति के बीच पच्चीस वर्षों की अवधि में लिखे गये। मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों में इलाचन्द्र जोशी के 'मुक्तिपथ', 'जिप्सी', 'जहाज का पंछी', 'भूत का भविष्य', अज्ञेय के 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी', सामाजिक यथार्थवादी उपन्यासकार रांगेय राघव और भैरव प्रसाद गुप्त के अनेक उपन्यास भी स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास की अमूल्य निधि हैं। तात्पर्य यह है कि बदलते हुए सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ के बीच पहले रचनाकारों ने अपने समय से कभी प्रभावित होकर और कभी उसे प्रभावित करने की भावना से विविध विषयक उपन्यासों की रचना की और हिन्दी उपन्यास की गति को तीव्र से तीव्रतर किया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी में आंचलिक उपन्यासों की रचना की विशेष प्रवृत्ति का उदय हुआ। इसके शुभारंभ का श्रेय फणीश्वरनाथ 'रेणु' को है। बिहार के अंचल विशेष के जीवन-यथार्थ, रहन-सहन, आचार-विचार को पर्याप्त निजता एवं रागात्मकता के साथ चित्रित करते हुए रेणु ने 'मैला आंचल' और 'परति परिकथा' जैसे उपन्यासों की रचना की। यह स्वातंत्र्योत्तर भारत में एक अंचल की आत्मपहचान से जुड़ी हुई सृजनात्मकता की एक सहज-स्वाभाविक आकांक्षा का प्रतिफल है। प्रेमचंद के बाद भारतीय ग्रामीण जीवन को बदलते हुए सामाजिक-राजनीतिक संदर्भों में नवोन्मेष के साथ चित्रित करने की यह ललक जितनी स्वतंत्रता की क्रोड़ से पैदा हुई है, शहरी जीवन की कुण्ठा, घुटन, एकरसता और आत्माभिमुखता की ऊब से भी प्रकट हुई है। प्रेमचंद के बाद हिन्दी उपन्यास में जो गाँव गायब हो गया था, उसे रेणु ने नये सौन्दर्यबोध और रागात्मकता के साथ चित्रित किया। उनके बाद कई लेखकों ने- उदयशंकर भट्ट (कब तक पुकारूँ), रामदरश मिश्र (पानी के प्राचीर, जल टूटता हुआ), राही मासूम रजा (आधा गाँव), शिवप्रसाद सिंह (अलग-अलग वैतरणी), श्रीलाल शुक्ल (रागदरबारी), हिमांशु जोशी (अरण्य), विवेकी राय (बबूल, पुरुष पुराण, लोकऋण, सोना माटी, समर शेष है), शैलेष मटियानी (कबूतर खाना, दो बूंद जल) आदि- आंचलिक उपन्यासों की रचना करके भारत के विभिन्न अंचलों के जीवन यथार्थ, आशा-आकांक्षा, संघर्ष-टूटन, राजनीतिक–सामाजिक पिछड़ेपन-जागृति आदि का चित्रण किया। उपन्यासकारों ने

विभिन्न अंचलों की जीवन-दशा को अपनी रचना का विषय बनाकर उनके प्रति अपनी करुणा सहानुभूति और रागात्मकता ही नहीं प्रदर्शित की है, तथाकथित प्रगति और विकास के दावेदारों की आँखों के सामने उपेक्षित और अलग-थलग पड़े अंचलों के दुःख-दर्द को प्रत्यक्ष करके उनके सारहीन, दिखाऊ और प्रपंचनापूर्ण मूल्यों की पोल भी खोली है। यह भी एक उल्लेखनीय तथ्य है स्वतंत्रता के बाद देश में नयी जीवन-स्थितियाँ पैदा हुईं। पहले उत्साह, ललक और उसके बाद मोहभंग, निराशा, हताशा, कुण्ठा आदि का वातावरण बना। शहरी मध्यवर्ग का विकास और उसके जीवन में तमाम विसंगतियाँ और विडम्बनाएँ पैदा हुईं। जनसंख्या के साथ-साथ मशीनों का उपयोग बढ़ने से भयानक बेकारी, भुखमरी और बेरोजगारी पैदा हुई। इन सबके साथ ही तरह-तरह की राजीनतिक जीवन-यथार्थ के चित्रण के प्रति सजग, संवेदनशील और प्रतिबद्ध किया। रचनाकारों में यथार्थ के प्रति आग्रह बढ़ा, अनुभव का सच कहने और लिखने की प्रेरणा जगी तथा 'हम जैसे है, वैसे ही दिखें' का यथार्थवादी दृष्टिकोण भी विकसित हुआ। यथार्थ की यह चेतना हिन्दी उपन्यास में कई रूपों में अभिव्यक्त हुई, कभी आधुनिकताबोध के रूप में कभी यथातथ्यवाद के रूप में, कभी मार्क्सवाद और जनवाद के रूप में।

आधुनिकतावाद नगरीकरण की तेज प्रक्रिया, पूँजीवादी लोकतंत्र से मोहभंग, अस्तित्ववादी दर्शन तथा पश्चिमी प्रभाव के फलस्वरूप पैदा हुआ। इसके प्रभावस्वरूप पारंपरिक मूल्य बिखर गये, सामाजिकता की जगह वैयक्तिकता का प्राधान्य हो गया और व्यक्ति अपनी असमर्थताओं-असफलताओं से घिरकर हताश, निराश, कुंठित हो गया। सातवें दशक के हिन्दी उपन्यासों में आधुनिकताबोध की ये सभी प्रवृत्तियाँ परिलक्षित हुई हैं। इस दृष्टि से मोहन राकेश (अंधेरे बंद कमरे, न आने वाला कल), निर्मल वर्मा (वे दिन), राजकमल चौधरी (मरी हुई मछली, शहर था : शहर नहीं था), उषा प्रियंवदा (रुकोगी नहीं राधिका), शिवप्रसाद सिंह (अलग-अलग वैतरणी), गिरिराज किशोर (यात्राएँ), मणि मधुकर (सफेद मेमने), ममता कालिया (बेघर), मन्नू भण्डारी (आपका बंटी) आदि के उपन्यास पठनीय हैं। इन उपन्यासों का व्यक्ति अकेला, ऊबा हुआ, संत्रस्त, व्यर्थताबोध से पीड़ित, अजनबियत से घिरा हुआ, थका-हारा ऐसा व्यक्ति है जिसको कोई भविष्य नहीं दिखाई देता, न

Scanned with OKEN Scanner

कहीं आशा-उत्साह की कोई किरण दिखाई पड़ती है। इनमें निर्मल वर्मा के उपन्यास और भी विशिष्ट हैं। 'वे दिन' का परिवेश विदेशी है। इसमें द्वितीय महायुद्धोत्तर काल की योरोपीय युवा पीढ़ी के अर्थहीन यौन-संबंधों, अकेलापन, ऊब, अनास्था, भय, कुण्ठा आदि का चित्रण हुआ है। मोहन राकेश के उपन्यासों में मध्यवर्गी जीवन की त्रासदी चित्रित है और राजकमल चौधरी में 'मरी हुई मछली' में अर्थाभाव झेलती हुई स्त्री के देह-गाथा का चित्रण हुआ है। इन उपन्यासों से भिन्न 'आपका बंटी' में उच्च मध्यवर्गीय जीवन का चित्रण हुआ है यहाँ आधुनिकता फैशन के रूप में नहीं, एक वास्तविकता के रूप में चित्रित है। इस उपन्यास में बेटे की वेदना के माध्यम से एक परित्यक्ता और पुनः विवाहिता माँ की मानसिक भावनाओं का चित्रण मर्मस्पर्शी रूप में किया गया है।

आधुनिकतावादी इन उपन्यासों के विपरीत प्रगतिवादी विचारधारा से सम्पन्न आठवें दशक के उपन्यासकारों की वह परंपरा है जिसका गहरा संबंध प्रेमचंद की जनवादी परम्परा से है। इस दृष्टि से श्री लाल शुक्ल (राग दरबारी), बदीउज्जमा (एक चूहे की मौत), जगदीशचन्द्र (धरती धन ना अपना), गिरिराज किशोर (जुगलबंदी), भीष्म साहनी (तमस), रामदरश मिश्र (अपने लोग), राही मासूम रजा (कटरा बी आरजू), कृष्णा सोबती (जिन्दगीनामा), मन्नू भंडारी (महाभोज) और मार्कण्डेय (अग्निबीज) के उपन्यास उल्लेखनीय है। आधुनिकतावादी लेखकों ने जिस जीवन को मध्यवर्गीय जीवन के अँधेरे बन्द कमरे' में घुटने के लिए कैद कर दिया था, उसे इन उपन्यासकारों ने जन-जीवन के बीच उन्मुक्त सांस लेने के लिए फिर अवकाश प्रदान किया। व्यंग्य, फैंटसी, यथार्थ जनता में क्रांति, विद्रोह, आन्दोलन का भाव जगाकर अपनी दुर्दशा-असहायावस्था से मुक्ति पाने का मार्ग भी दिखाया। इन उपन्यासों में राजनीतिक उठापटक, लोकतंत्र की छीछालेदर, ग्रामीण जीवन की रेंगती-घसीटती जिन्दगी, जातिवादी संघर्ष, साम्प्रदायिक विद्वेश, उन्माद और संघर्ष, मुर्दा होते हुए सामाजिक संबंध, युवा-विद्रोह आदि का जीता-जागता चित्र कभी आलोचनात्मक और कभी व्यंग्यात्मक ढंग से, कभी फैंटसी के सहारे उपस्थित किया गया है। 'रागदरबारी' की व्यंग्यात्मकता और 'एक चूहे की मौत' की फैंटसी इस दौर की उपन्यास कला को एक नया आयाम देती है।

Scanned with OKEN Scanner

(ङ) समकालीन हिन्दी उपन्यास

नवें दशक में भी पिछले दशक के कई उपन्यासकारों के नये उपन्यास प्रकाश में आये हैं। जैसे– 'रात का रिपोर्टर' (निर्मल वर्मा), 'मय्यादास की माड़ी' (भीष्म साहनी), 'बिना दरवाजे के मकान', 'दूसरा घर' (रामदरश मिश्र), 'झीना चाँद' (शिवप्रसाद सिंह), 'बंधन', 'अधिकार', 'कर्म', 'अभिज्ञान' (नरेन्द्र कोहली), 'सोना माटी' (विवेकी राय) आदि। नवें दशक मे जिन उपन्यासकारों ने अपनी विशिष्ट पहचान बनाई उनमें मनोहर श्याम जोशी (कुरु कुरु स्वाहा, कसप, हरिया, हरिकुलिम), अब्दुल बिस्मिल्लाह (झीनी-झीनी बीनी चदरिया, दंतकथा, जहरबाद), मंजूर एहतेशाम (सूखा बरगद), संजीव (सर्कस, सावधान नीचे आग है) के नाम उल्लेखनीय है। उसके अगले दशकों में वीरेन्द्र जैन (डूब, पार, पंचनामा), कमलाकान्त त्रिपाठी (पाही घर), पंकज बिष्ट (उस चिड़िया का नाम), प्रियंवदा (वे यहाँ कैद हैं) आदि ने हिन्दी उपन्यास को एक नया जीवन प्रदान किया है। इसकी भाषा-शैली इतनी रोचक और आकर्षक है कि पाठक पूरी तरह इसमें तल्लीन हो जाता है। जनवादी, मार्क्सवादी और क्रान्तिकारी रचनाओं के बीच यह मानवीय भावनाओं का भिन्न स्वाद देने वाली विशिष्ट रचना है।

उपर्युक्त उपन्यासों के संदर्भ में कहा जा सकता है कि समकालीन हिन्दी उपन्यास में किसी खास प्रवृत्ति या विचारधारा का प्रभाव या दबाव नहीं है। इन उपन्यासों में विषयगत विविधता तो है ही, शिल्पगत नवीनता और प्रयोगशीलता भी विद्यमान है इसलिए ये उपन्यास किसी परम्परा में अन्तर्भुक्त न होकर अपनी विशिष्ट पहचान बनाते हैं। 'कुरु कुरु स्वाहा' की रोमैण्टिक कथा और वम्बइया हिन्दी कथा का अलग रंग है तो 'कसप' में उत्तर आधुनिकता की झाँकी विद्यमान है, 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' में बनारस के बुनकरों का जीवन-यथार्थ और संघर्ष उन्हीं की बोली-बानी में है तो 'सूखा-बरगद' में हिन्दी-मुस्लिम संबंध, 'डूब' में मध्यप्रदेश के पिछड़े अंचल की व्यथा-कथा है तो 'उस चिड़िया का नाम' में पहाड़ी जीवन का संघर्ष, 'मय्यादास की माड़ी' में पंजाब की तीन पीढ़ियों का इतिवृत है। 'पाहीघर' में ब्रिटिश शासन के समय के अवध जनपद की संघर्ष-गाथा अंकित है।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

अन्य विधाओं के रचनाकारों की अपेक्षा वर्तमान उपन्यासकार वैचारिक कठमुल्लेपन और सीमित जीवनानुभव की बंदिशों से काफी मुक्त है।

स्वातंत्र्योत्तर काल से ही हिन्दी उपन्यास में महिला कथाकारों की एक सशक्त पीढ़ी भी तैयार हुई, जिसने अपने रचना-संसार को विशिष्ट रूप-रंग प्रदान करके उसे एक नयी पहचान दी है। शशिप्रभा शास्त्री, शिवानी, कृष्णा सोबती, दीप्ति खण्डेलवाल, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, निरूपमा सेवती, मेहरुन्निसा परवेज, राजी सेठ, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, चित्रा मुद्गल, मृणाल पाण्डेय, नासिरा शर्मा, प्रभा खेतान आदि ने उपन्यासकारों के बीच अपनी महत्त्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराई है। सातवें दशक में उषा प्रियंवदा (पचपन खंभे लाल दीवारें), मन्नू भंडारी (एक इंच मुस्कान- सहलेखन के तौर पर) और कृष्णा सोबती (मित्रों मरजानी) ने जो सृजन-यात्रा शुरू की, वह उत्तरोत्तर गति पाती गई। मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी', 'महाभोज', बोल्डनेस के लिए ख्यात कृष्णा सोबती ने 'गुरजमुखी अंधेरे के', 'जिन्दगीनामा', 'दिलोदानिश' और उषा प्रियंवदा ने 'रुकोगी नहीं राधिका' जैसे उपन्यास लिखकर अपने को हिन्दी उपन्यास-जगत् में पूरी तरह प्रतिष्ठित कर लिया। आठवें दशक में मृदुला गर्ग (चितकोबरा), ममता कालिया (नरक दर नरक), मृणाल पाण्डेय (पटरंग पुराण), नवें दशक में राजी सेठ (तत्सम), नासिरा शर्मा (शाल्मली, ठीकरे की मंगनी, जिन्दा मुहावरे) ने अपनी पहचान बनाई। वर्तमान दशक में प्रभा खेतान (छिन्नमस्ता, तालाबन्दी, अपने-अपने चेहरे) और मैत्रेयी पुष्पा (इदन्नमम) ने अपने को प्रतिष्ठित कर लिया है।

इन उपन्यास-लेखिकाओं ने सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ पर जैसी विचारोत्तेजक कृतियाँ दी हैं, उनसे साफ तौर पर माना जा सकता है कि उनके पास अनुभव-वैविध्य भी है और रचनात्मक दृष्टि भी। 'आपका बंटी', 'महाभोज', "जिन्दगीनामा' जैसे उपन्यास समकालीन हिन्दी उपन्यास को प्रत्येक दृष्टि से समृद्ध करने वाले उपन्यास है।

हिन्दी उपन्यास में दलित चेतना

Scanned with OKEN Scanner

अन्य विधाओं के रचनाकारों की अपेक्षा वर्तमान उपन्यासकार वैचारिक कठमुल्लेपन और सीमित जीवनानुभव की बंदिशों से काफी मुक्त है।

स्वातंत्र्योत्तर काल से ही हिन्दी उपन्यास में महिला कथाकारों की एक सशक्त पीढ़ी भी तैयार हुई, जिसने अपने रचना-संसार को विशिष्ट रूप-रंग प्रदान करके उसे एक नयी पहचान दी है। शशिप्रभा शास्त्री, शिवानी, कृष्णा सोबती, दीप्ति खण्डेलवाल, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, निरुपमा सेवती, मेहरुन्निसा परवेज, राजी सेठ, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, चित्रा मुद्गल, मृणाल पाण्डेय, नासिरा शर्मा, प्रभा खेतान आदि ने उपन्यासकारों के बीच अपनी महत्त्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराई है। सातवें दशक में उषा प्रियंवदा (पचपन खंभे लाल दीवारें), मन्नू भंडारी (एक इंच मुस्कान- सहलेखन के तौर पर) और कृष्णा सोबती (मित्रों मरजानी) ने जो सृजन-यात्रा शुरू की, वह उत्तरोत्तर गति पाती गई। मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी', 'महाभोज', बोल्डनेस के लिए ख्यात कृष्णा सोबती ने 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'जिन्दगीनामा', 'दिलोदानिश' और उषा प्रियंवदा ने 'रुकोगी नहीं राधिका' जैसे उपन्यास लिखकर अपने को हिन्दी उपन्यास-जगत् में पूरी तरह प्रतिष्ठित कर लिया। आठवें दशक में मृदुला गर्ग (चितकोबरा), ममता कालिया (नरक दर नरक), मृणाल पाण्डेय (पटरंग पुराण), नवें दशक में राजी सेठ (तत्सम), नासिरा शर्मा (शाल्मली, ठीकरे की मंगनी, जिन्दा मुहावरे) ने अपनी पहचान बनाई। वर्तमान दशक में प्रभा खेतान (छिन्नमस्ता, तालाबन्दी, अपने-अपने चेहरे) और मैत्रेयी पुष्पा (इदन्नमम) ने अपने को प्रतिष्ठित कर लिया है।

इन उपन्यास-लेखिकाओं ने सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ पर जैसी विचारोत्तेजक कृतियाँ दी हैं, उनसे साफ तौर पर माना जा सकता है कि उनके पास अनुभव-वैविध्य भी है और रचनात्मक दृष्टि भी। 'आपका बंटी', 'महाभोज', "जिन्दगीनामा' जैसे उपन्यास समकालीन हिन्दी उपन्यास को प्रत्येक दृष्टि से समृद्ध करने वाले उपन्यास है।

हिन्दी उपन्यास में दलित चेतना

Scanned with OKEN Scanner

हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य की पृथक धारा का जोर दिखाई पड़ने लगा किन्तु हिन्दी उपन्यास में अभी यह बड़े क्षीण रूप में विद्यमान है। जगप्रकाश कर्दम के 'छप्पर' (1994) और प्रेम कपाड़िया के 'मिट्टी की सौगन्ध' (1995) से हिन्दी में दलित-उपन्यास की वह परम्परा शुरू हो रही है जिसे दलितों के द्वारा दलितों के जीवन पर लिखा जाने वाला साहित्य कहा जाता है। इन उपन्यासों में दलित जीवन का भोगा हुआ यथार्थ चित्रित हुआ है। यदि 'दलितों के द्वारा दलितों के जीवन का साहित्य' की अवधारणा को थोड़ी देर के लिए अलग करके मानवता की व्यापक अवधारणा के परिप्रेक्ष्य में साहित्य में अभिव्यक्त दलित चेतना की बात करें तो कहना पड़ेगा कि प्रेमचंद से लेकर आज तक अनेक गैरदलित साहित्यकारों ने दलितों के जीवन पर प्रकाश डालने वाले और उनके संघर्ष को शक्ति और दिशा देने वाले अनेक उपन्यासों की रचना की है। प्रेमचंद के 'कर्मभूमि', 'रंगभूमि' और 'गोदान' उपन्यासों में जो दलितों की पीड़ा, दुर्दशा और संघर्ष-कथा वर्णित है वह महज दया या सहानुभूति से नहीं उपजी है, उसके पीछे प्रेमचंद का प्रगतिशील दृष्टिकोण और उस जीवन का मार्मिक साक्षात्कार सक्रिय है। 'नाच्यौ बहुत गोपाल' (अमृतलाल नागर), 'धरती धन न अपना', 'नरककुंड में वास' (जगदीश चन्द्र), 'एक टुकड़ा इतिहास' (गोपाल उपाध्याय), 'परिशिष्ट' (गिरिराज किशोर), उत्तरगाथा (मधुकर सिंह), 'दण्ड विधान' (मुद्राराक्षस), 'बंधुआ रामदास' (नीलकांत), 'महाभोज' (मन्नू भण्डारी), 'पाथर घाटी का शोर' (पुन्नी सिंह) आदि उपन्यासों में दलित जीवन पर जो प्रकाश डाला गया है, वह अनुभूत यथार्थ लिखने वाले दलित लेखकों के साहित्य से किसी भी तरह कम नहीं है। इन उपन्यासों में समाज के सदियों से सताए, उपेक्षित, शोषित और दलितों का जीवन अंकित करते समय न केवल सामाजिक जीवन की जड़ता, क्रूरता और अमानवीयता को रेखांकित किया गया है, बल्कि दलितों में अपने हक के लिए संघर्ष करने और सबके समान जीवन जीने की भावना को प्रेरित किया गया है। यदि दलितों की साहित्य-धारा इस चेतना में योग देकर या उससे जुड़कर विकास का मार्ग तलाशे तो इससे एक स्वस्थ दृष्टिकोण का निर्माण होगा और समाज की वास्तविक उन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा।

Scanned with OKEN Scanner

[11:48 AM, 12/15/2023] Bansode K. D: अनुवाद की आवश्यकता एवं महत्व

आधुनिक युग में अनुवाद की महत्ता व उपादेयता को विश्वभर में स्वीकारा जा चुका है। वैदिक युग के 'पुन: कथन' से लेकर आज के 'ट्रांसलेशन' तक आते-आते अनुवाद अपने स्वरूप और अर्थ में बदलाव लाने के साथ-साथ अपने बहुमुखी व बहुआयामी प्रयोजन को सिद्ध कर चुका है। प्राचीन काल में 'स्वांत: सुखाय' माना जाने वाला अनुवाद कर्म आज संगठित व्यवसाय का मुख्य आधार बन गया है।

दूसरे शब्दों में कहें तो अनुवाद प्राचीन काल की व्यक्ति परिधि से निकलकर आधुनिक युग की समष्टि परिधि में समा गया है। आज विश्वभर में अनुवाद की आवश्यकता जीवन के हर क्षेत्र में किसी-न-किसी रूप में अवश्य महसूस की जा रही है। और इस तरह अनुवाद आज के जीवन की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

बीसवीं शताब्दी के अवसान और इक्कीसवीं सदी के स्वागत के बीच आज जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहाँ पर हम चिन्तन और व्यवहार के स्तर पर अनुवाद के आग्रही न हों। भारत में अनुवाद की परम्परा पुरानी है किन्तु अनुवाद को जो महत्व 21वीं सदी के उत्तरार्द्ध में प्राप्त हुआ वह पहले नहीं हुआ था।

सन् 1947 में भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात देश की आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन आया। विश्व के अन्य देशों के साथ भारत के आर्थिक एवं राजनीतिक समीकरण बदले। राजनैतिक और आर्थिक कारणों के साथ विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी का विकास भी इस युग की प्रमुख घटना है जिसके फलस्वरूप विभिन्न भाषा-भाषी समुदायों में सम्पर्क की स्थिति उभर कर सामने आयी।

आज विश्व के अधिकांश बड़े देशों में एक प्रमुख भाषा के साथ-साथ अन्य कई भाषाएँ भी गौण भाषा के रूप में समान्तर चल रही हैं। अतएव एक ही भौगोलिक सीमा की राजनैतिक, प्रशासनिक इकाई के अन्तर्गत भाषायी बहुसंख्यक भी रहते हैं और भाषायी अल्पसंख्यक भी।

अत: विभिन्न भाषाभाषियों के बीच उन्हीं की अपनी भाषा में सम्पर्क स्थापित कर लोकतंत्र में सबकी हिस्सेदारी सुनिश्चित की जा सकती है। वस्तुत: अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों के बीच राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा विज्ञान एवं

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बढ़ती हुई आदान-प्रदान की अनिवार्यता ने अनुवाद एवं अनुवाद कार्य के महत्त्व को बढ़ा दिया है।

हमारे देश में अनुवाद का महत्त्व प्राचीन काल से ही स्वीकृत है। प्रो. जी. गोपीनाथन ने ठीक ही लक्ष्य किया था कि अनुवाद आज व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकता बन गया है। आज के सिमटते हुए संसार में सम्प्रेषण माध्यम के रूप में अनुवाद भी अपना निश्चित योगदान दे रहा है।

भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद की उपादेयता स्वयं सिद्ध है। भारत के विभिन्न प्रदेशों के साहित्य में निहित मूलभूत एकता के स्वरूप को निखारने के लिए अनुवाद ही एक मात्र अचूक साधन है। इस तरह अनुवाद द्वारा मानव की एकता को रोकनेवाली भौगोलिक और भाषायी दीवारों को ढहाकर विश्वमैत्री को और सुदृढ़ बना सकते हैं।

अनुवाद की आवश्यकता

बीसवीं शताब्दी में देशों के बीच की दूरियाँ कम होने के परिणामस्वरूप विभिन्न वैचारिक धरातलों और आर्थिक, औद्योगिक स्तरों पर पारस्परिक भाषिक विनिमय बढ़ा है और इस विनिमय के साथ-साथ अनुवाद का प्रयोग और अधिक किया जाने लगा है। आज के वैज्ञानिक युग में अनुवाद बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया है। यदि हमें दूसरे देशों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलना है तो हमें उनके यहाँ विज्ञान के क्षेत्र में, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में हुई प्रगति की जानकारी होनी चाहिए और यह जानकारी हमें अनुवाद के माध्यम से मिलती है।

1. राष्ट्रीय एकता में अनुवाद की आवश्यकता

भारत जैसे विशाल राष्ट्र की एकता के प्रसंग में अनुवाद की आवश्यकता असंदिग्ध है। भारत की भौगोलिक सीमाएँ न केवल कश्मीर से कन्याकुमारी तक बिखरी हुई हैं बल्कि इस विशाल भूखण्ड में विभिन्न विश्वासों एवं सम्प्रदायों के लोग रहते हैं जिनकी भाषाएँ एंव बोलियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं। भारत की अनेकता में एकता इन्हीं अर्थों में है कि विभिन्न भाषाओं, विभिन्न जातियों, विभिन्न सम्प्रदायों एवं विभिन्न विश्वासों के देश में भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता कहीं भी बाधित नहीं

Scanned with OKEN Scanner

होती। एक समय में महाराष्ट्र का जो व्यक्ति सोचता है वही हिमाचल का निवासी भी चिन्तन करता है।

भारत के हजारों वर्षों के अद्यतन इतिहास चिन्तन ने इस धारणा को पुष्ट किया है कि मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन से लेकर आज के प्रगतिशील आन्दोलन तक भारतीय साहित्य की दिशा एक रही है। यह बात अनुवाद के द्वारा ही सम्भव हो सकी कि जिस समय गोस्वामी तुलसीदास राम के चरित्र पर महाकाव्य लिख रहे थे, हिन्दी के समानान्तर ओड़िआ में बलराम, बांग्ला में कृत्तिवास, तेलुगु में पोतना, तमिल में कम्बन तथा हरियाणवी में अहमदबख्श अपने-अपने साहित्य में राम के चरित्र को नया रूप दे रहे थे।

स्वतंत्रता आन्दोलन में जिस साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के विरोध की चिंगारी सुलगी थी उसका उत्कर्ष छायावादी दौर की विभिन्न भारतीय भाषाओं की कविता में मिलता है।

2. संस्कृति के विकास में अनुवाद की आवश्यकता

दुनिया के जिन देशों में विभिन्न जातियों एवं संस्कृतियों का मिलन हुआ है वहाँ सामासिक संस्कृति के निर्माण में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। अनुवाद की परम्परा के अध्ययन से पता चलता है कि ईसा के तीन सौ वर्ष पूर्व रोमन लोगों का ग्रीक के लोगों से सम्पर्क हुआ जिसके फलस्वरूप ग्रीक से लैटिन में अनुवाद हुए। इसी प्रकार ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी में स्पेन के लोग इस्लाम के सम्पर्क में आए और बड़े पैमाने पर योरपीय भाषाओं में अरबी का अनुवाद हुआ। भारत में भी विभिन्न जातियों एवं विश्वासों के लोग आए।

आज की भारतीय संस्कृति जिसे हम सामासिक संस्कृति कहते हैं उसके निर्माण में हजारों वर्षों के विभिन्न धर्मों, मतों एवं विश्वासों की साधना छिपी हुई है।

इन सभी मतों एवं विश्वासों को आत्मसात कर जिस भारतीय संस्कृति का निर्माण हुआ है उसके पीछे अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका असंदिग्ध है।

3. साहित्य के अध्ययन में अनुवाद की आवश्यकता

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

साहित्य के अध्ययन में अनुवाद का महत्व आज व्यापक हो गया है। साहित्य यदि जीवन और समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करता है तो विभिन्न भाषाओं के साहित्य के सामूहिक अध्ययन से किसी भी समाज, देश या विश्व की चिन्तन-धारा एवं संस्कृति की जानकारी मिलती है। अनुवाद का महत्व निम्नलिखित साहित्यों के अध्ययन में सहायक है-

भारतीय साहित्य का अध्ययन।

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन।

तुलनात्मक साहित्य का अध्ययन।

भारतीय साहित्य के अध्ययन से यह पता चलता है कि विभिन्न साहित्यक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक आन्दोलनों में हिन्दी एवं हिन्दीतर भाषा के साहित्यकारों का स्वर प्राय: एक जैसा रहा है। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन, स्वतन्त्रता आन्दोलन तथा नक्सलबाड़ी आन्दोलनों को प्राय: सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में अभिव्यक्ति मिली है।

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य के अनुवाद से ही यह तथ्य प्रकाश में आया कि दुनिया के विभिन्न भाषाओं में लिखे गए साहित्य में ज्ञान का विपुल भण्डार छिपा हुआ है। भारत में अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का अनुवाद तो भारत में सूफियों के दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रचलन के साथ ही शुरू हो गया था; किन्तु इसे व्यवस्थित स्वरूप आधुनिक युग में ही प्राप्त हुआ। शेक्सपियर, डी.एच. लॉरेंस, मोपासाँ तथा सार्त्र जैसे चिन्तकों की रचनाओं के अनुवाद से भारतीय जनमानस का साक्षात्कार हुआ एवं कालिदास, रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं प्रेमचन्द की रचनाओं से विश्व प्रभावित हुआ।

दुनिया के विभिन्न भाषाओं के अनुवाद द्वारा ही तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में सहायता मिलती है। तुलनात्मक साहित्य द्वारा इस बात का पता लगाया जाता है कि देश, काल और समय की भिन्नता के बावजूद विभिन्न भाषाओं के रचनाकारों के साहित्य में साम्य और वैषम्य क्यों है ? अनुवाद के द्वारा ही जो तुलनीय है वह तुलनात्मक अध्ययन का विषय बनता है। प्रेमचन्द और गोर्की, निराला और इलियट

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

तथा राजकमल चौधरी एवं मोपासाँ के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन अनुवाद के फलस्वरूप ही सम्भव हो सका।

4. व्यवसाय के रूप में अनुवाद की आवश्यकता

वर्तमान युग में अनुवाद ज्ञान की ऐसी शाखा के रूप में विकसित हुआ है जहाँ इज्जत, शोहरत एवं पैसा तीनों हैं। आज अनुवादक दूसरे दर्जे का साहित्यकार नहीं बल्कि उसकी अपनी मौलिक पहचान है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से हुए विकास के साथ भारतीय परिदृश्य में कृषि, उद्योग, चिकित्सा, अभियान्त्रिकी और व्यापार के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। इन क्षेत्रों में प्रयुक्त तकनीकी शब्दावली का भारतीयकरण कर इन्हें लोकोन्मुख करने में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध रोजगार के क्षेत्र में अनुवाद को महत्त्वपूर्ण पद पर आसीन करता है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिए जाने के पश्चात् केन्द्र सरकार के कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों, संस्थानों और प्रतिष्ठानों में राजभाषा प्रभाग की स्थापना हुई जहाँ अनुवाद कार्य में प्रशिक्षित हिन्दी अनुवादक एवं हिन्दी अधिकारी कार्य करते हैं। आज रोजगार के क्षेत्र में अनुवाद सबसे आगे है। प्रति सप्ताह अनुवाद से सम्बन्धित जितने पद यहाँ विज्ञापित होते हैं अन्य किसी भी क्षेत्र में नहीं।

5. नव्यतम ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में अनुवाद की आवश्यकता

औद्योगीकरण एवं जनसंचार के माध्यमों में हुए अत्याधुनिक विकास ने विश्व की दिशा ही बदल दी है। औद्योगिक उत्पादन, वितरण तथा आर्थिक नियन्त्रण की विभिन्न प्रणालियों पर पूरे विश्व में अनुसंधान हो रहा है। नई खोज और नई तकनीक का विकास कर पूरे विश्व में औद्योगिक क्रान्ति मची हुई है। इस क्षेत्र में होने वाले अद्यतन विकास को विभिन्न भाषा-भाषी राष्ट्रों तक पहुँचाने में भाषा एवं अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

वैज्ञानिक अनुसंधानों को तीव्र गति से पूरे विश्व में पहुँचा देने का श्रेय नव्यतम विकसित जनसंचार के माध्यमों को है। आज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, कृषि

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

तथा व्यवसाय आदि सभी क्षेत्रों में जो कुछ भी नया होता है वह कुछ ही पलों में टेलीफोन, टेलेक्स तथा फैक्स जैसी तकनीकों के माध्यम से पूरे विश्व में प्रसारित एवं प्रसारित हो जाता है। आज जनसंचार के माध्यमों में होने वाले विकास ने हिन्दी भाषा के प्रयुक्ति-क्षेत्रों को विस्तृत कर दिया है। विज्ञान, व्यवसाय, खेलकूद एवं विज्ञापनों की अपनी अलग शब्दावली हैं।

संचार माध्यमों में गतिशीलता बढ़ाने का कार्य अनुवाद द्वारा ही सम्भव हो सका है तथा गाँव से लेकर महानगरों तक जो भी अद्यतन सूचनाएँ हैं वे अनुवाद के माध्यम से एक साथ सबों तक पहुँच रही हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि अनुवाद ने आज पूरे विश्व को एक सूत्र में पिरो दिया है।

अनुवाद का महत्व

हमारे दैनिक जीवन में अनुवाद का बहुआयामी तथा विस्तृत महत्व है। अनुवाद आधुनिक युग की अनिवार्य आवश्यकता है। विश्व में अनेक भाषाएं तथा बोलियां बोली जाती हैं, ऐसी स्थिति में अनुवाद वैश्विक विचार-विमर्श की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। हमारे राष्ट्र भारत की बात करें तो भी स्थिति काई अलग नहीं है। हमारी 22 मान्यता प्राप्त भाषाएं हैं इसे देखते हुए राष्ट्रीय एकता के लिए अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

हिन्दी तथा अंग्रेजी संपर्क भाषा के रूप में सर्वाधिक उपयोग में लाई जाती हैं। विभिन्न टी वी चैनलों के कारण भारत में हिन्दी तथा अंग्रेजी को समझने, बोलने एवं लिख पाने वाले लोगों की संख्या में तीव्र बढ़ोतरी हो रही है। भारतीयों द्वारा विभिन्न देशों में जा कर व्यापार तथा जीवकोपार्जन करने के कारण भी हिन्दी तथा अंग्रेजी का प्रसार हो रहा है। आज अनुवाद का महत्व इसलिए भी ज्यादा हो गया है चूंकि शिक्षा का स्तर लगातार बढ़ रहा है। जिससे मानव की आज की हिन्दी जिज्ञासु प्रवृति और अधिक बलवति हो रही है। आज मानव दूसरी भाषा एवं संस्कृति में उपलब्ध ज्ञान, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, साहित्यिक, वाणिज्यिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों से संबंधित जानकारी पाना चाहता है।

Scanned with OKEN Scanner

अनुवाद ज्ञान के संचार हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण है। आज हम अनुदित फिल्में देखकर दूसरी संस्कृतियों के बारे में अधिक जानते हैं। हमारी विज्ञान की जानकारी में भी अनुवाद का महत्वपूर्ण भाग है, विज्ञान का सृजन अनेकों भाषाओं में हुआ और अनुवाद के कारण ही यह सर्वत्र उपलब्ध है। आजकल ओलंपिक खेल लंदन में चल रहे हैं, यह बड़ा आश्चर्यजनक लगता है की 190 राष्ट्रों के खिलाड़ी किस प्रकार विभिन्न भाषा-भाषी होने के बावजूद नियमों का पालन करते हुए विभिन्न प्रतिस्पर्धाओं में भाग ले रहे हैं, निश्चय ही अनुवाद का महत्व इसमें परिलक्षित होता है।

इतिहास में अपने धर्म, मत, तथा संप्रदाय का प्रचार करने की दृष्टि भी अनुवाद का उपयोग किया गया। महान राजा अशोक (272-233 ई0 पू0) ने बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए अफगानिस्तान, यूनान, सीरीया, मैसिडोनिया, पर्शिया, चीन, जापान, श्रीलंका तथा अन्य राष्ट्रों में अपने दूत भेजे। उन्होंने बौद्ध धर्म की प्रचार सामग्री का उन राष्ट्रों की भाषा में अनुवाद कर उसका प्रचार किया।

इस्लाम धर्म के प्रचारकों द्वारा भी विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में अपने धर्म के प्रचार हेतु अनुवाद का सहारा लिया। आजकल पाश्चात्य राष्ट्र अपनी संस्कृति का प्रसार करने के लिए भी अनुवाद का सहारा ले रहे हैं। वे इलैक्ट्रॉनिक मीडिया तथा प्रिंट मीडिया में अपनी संस्कृति की खबरें विश्व की अन्य भाषाओं में प्रसारित करवा रहे हैं। उन्हें इसमें कामयाबी भी मिल रही है, दूसरी संस्कृतियों में घुलने-मिलने के लिए अनुवाद का सहारा लेना ही पड़ता है। भारतीय लोगों द्वारा विश्व के लगभग सभी राष्ट्रों में काम-धन्धों की तलाश में जाने से हिन्दी समझने वालों की संख्या बढ़ी है। हिन्दी अब केवल भारतीय उपमहाद्वीप तक सीमित नही है अपितु विश्व की चुनिंदा भाषाओं में शुमार है। विश्व की कुल जनसंख्या के अनुपात में छठवें हिस्से की आबादी हिन्दी समझ तथा बोल सकती है, परंतु हिन्दी लिख पाने वाले लोगों की संख्या इतनी नहीं है।

अनुवाद करते समय अर्थ का अनर्थ न हो यह भी महत्वपूर्ण है। सही और सार्थक अनुवाद के लिए अनुवादक को दोनों भाषाओं का ज्ञान अति-आवश्यक है। अनुवादक को श्रोता या पाठक की आवश्यकताओं के अनुरूप अपने अनुवाद को प्रस्तुत करना

LATUR

Scanned with OKEN Scanner

चाहिए। अनुवाद की प्रकृति विषय पर भी निर्भर करती है। शिक्षा, व्यवसाय, विज्ञान, साहित्य, अध्यातम, राजनीती इत्यादि क्षेत्रों में अनुवाद अपनी-अपनी विशिष्ट शैली में करना पड़ता है। शब्दों के अर्थ भी परिस्थिति तथा प्रसंग के अनुसार भिन्न हो सकते हैं, अनुवादक को इसका भी ध्यान रखना आवश्यक है। इसे देखते हुए कहा जा सकता है कि अनुवाद विज्ञान भी है तथा कला भी।

जे डब्ल्यू गेटे का कथन है कि "अनुवाद की अपूर्णता के संबंध में कोई चाहे जो भी कहे, परंतु अनुवाद विश्व के सभी कार्यों से अधिक महत्वपूर्ण और महानतम कार्य है।" यदि अनुवाद ना होता तो हमारी स्थिति कुएं के मेढक जैसी होती। हमें केवल हमारे समाज के ज्ञान एवं संस्कृति की जानकारी होती, जो निश्चित रूप से अभी उपलब्ध जानकारी की तुलना में नगण्य होती और ऐसा सभी समाजों के साथ होता। हर व्यक्ति संसार की प्रत्येक भाषा नहीं सीख सकता। ऐसी स्थिति संपर्क स्थापित कर सकती है। जब तक विश्व के सभी लोग एक जैसी भाषा की खोज नहीं करते जिसे सभी लोग समझें तथा अपनायें तब तक अनुवाद का महत्व बना रहेगा तथा अनुवादकों का आवश्यकता रहेगी। यह सच ही की अनुवाद में कभी-कभी कुछ कमियां रह जाती हैं तथा अच्छे अनुवादक बहुत कम हैं फिर भी उनका महत्व है। अनुवादकों को भी अपनी दक्षता में निरंतर सुधार करते रहना चाहिए तभी वे बेहतर कर पाऐंगे।

आजकल विशिष्ट अनुशासन के रूप में अनुवाद विषय के अध्ययन की आवश्यकता और उपादेयता पर विशेष बल दिया जा रहा है। विभिन्न विश्वविद्यालय अब इसे विषय के रूप में पढ़ा रहे हैं, इससे निश्चय ही अनुवाद के स्तर में बढ़ोतरी होगी। आजकल मशीनी अनुवाद पर भी कार्य हो रहे हैं। इनमें कुछ सफलता भी प्राप्त हुई है। परंतु इस क्षेत्र में अभी काफी कार्य किया जाना शेष है।

21वीं सदी में अनुवाद की महत्ता

21वीं शताब्दी के मौजूदा दौर में अनुवाद एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है। भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश के जन-समुदायों के बीच अंत:संप्रेषण के संवाहक के रूप में अनुवाद का बहुआयामी प्रयोजन सर्वविदित है। यदि आज के इस युग को

Scanned with OKEN Scanner

'अनुवाद का युग' कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति न होगी, क्योंकि आज जीवन के हर क्षेत्र में अनुवाद की उपादेयता को सहज ही सिद्ध किया जा सकता है। धर्म-दर्शन, साहित्य-शिक्षा, विज्ञान-तकनीकी, वाणिज्य व्यवसाय, राजनीति-कूटनीति, आदि सभी क्षेत्रों से अनुवाद का अभिन्न संबंध रहा है। अत: चिंतन और व्यवहार के प्रत्येक स्तर पर आज मनुष्य अनुवाद पर आश्रित है। इतना ही नहीं विश्व-संस्कृति के विकास में भी अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

विश्व के विभिन्न प्रदेशों की जनता के बीच अंत:संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में, उनके बीच भावात्मक एकता को कायम रखने में, देश-विदेश के नवीन ज्ञान-विज्ञान, शोध-चिंतन को दुनिया के हर कोने तक ही नहीं, आम जनता तक भी पहुँचाने में तथा दो भिन्न संस्कृतियों को नजदीक लाकर एक सूत्र में पिरोने में अनुवाद की महती भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

प्रो. जीगोपीनाथन के शब्दों में, 'अनुवाद मानव की मूलभूत एकता की व्यक्ति-चेतना एवं विश्व-चेतना के अद्वैत का प्रत्यक्ष प्रमाण है'। अत: मौजूदा शताब्दी में अनुवाद ने अपनी संकुचित साहित्यिक परिधि को लाँघकर प्रशासन, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, तकनीकी, चिकित्सा, कला, संस्कृति, अनुसंधान, पत्रकारिता, जनसंचार, दूरस्थ शिक्षा, प्रतिरक्षा, विधि, व्यवसाय आदि हर क्षेत्र में प्रवेश कर यह साबित कर दिया है कि अनुवाद समकालीन जीवन की अनिवार्यता है।

हिन्दी अब बाजार-तंत्र की, व्यवसाय-व्यापार की, संचार-तंत्र की तथा शासकीय व्यवस्था की भाषा बन रही है। हिन्दी भाषा में और हिन्दी भाषा से अनुवाद की परम्परा अब सुदीर्घ होने के साथ-साथ पुख्ता और उल्लेखनीय भी होती जा रही है। लोठार लुत्से की बात पर गौर करें तो हमें हिन्दी, मराठी, बांग्ला, तमिल, तेलुगू या कन्नड़ लेखकों को उनकी भाषा के नहीं, भारतीय लेखक के रूप में देखना चाहिए। तभी भारतीय भाषाएँ भारत में और फिर विश्व में प्रतिष्ठा प्राप्त करेंगी। ओड़िआ का लेखक सारे ओड़िशा में प्रतिष्ठा प्राप्त कर ले तो यह कोई छोटी बात नहीं होगी, लेकिन ओड़िआ का लेखक पूरे भारत में प्रतिष्ठा हासिल करें तो यह उससे भी बड़ी बात होगी और उसके लिए चुनौती भी। और जो लेखक इस चुनौती को स्वीकार कर उसमें खरे उतरते हैं, वे सचमुच बड़े, बहुत बड़े लेखक सिद्ध होते हैं। इसके लिए

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

जरूरी है कि भारतीय भाषाओं में अनुवाद की प्रक्रिया को तेज किया जाए। अनुवाद के बिना हमारा कोई भी लेखक यूरोप-अमेरिका तो दूर अपने ही देश में भारतीय लेखक के रूप में प्रतिष्ठित नहीं हो सकता।

उदाहरण के लिए फकीर मोहन सेनापति, प्रतिभा राय, सीताकान्त महापात्र आदि अगर हिन्दी में अनूदित न होते तो क्या भारतीय लेखक के रूप में इतने बड़े पैमाने पर देश और दुनिया में स्वीकार्य हो सकते थे ? निश्चय ही नहीं। अनुवाद की ताकत पाकर ही कोई बड़ा लेखक और भी बड़ा सिद्ध होता और अपनी सामर्थ्य को दिग-दिगंत तक फैला पाता है। अनुवाद के बगैर वह, वह सिद्ध नहीं हो सकता, जो दरअसल वह होता है और यह काम अनुवादक ही कर सकता है। ऐसे में अनुवाद की महत्ता को जन-जन तक पहुँचाना और अनुवादकों को सम्मानजनक स्थान दिलाना जरूरी हो गया है ताकि भारतीय साहित्य और मनीषा को दूसरों तक पहुँचा कर राष्ट्रीय सेतु का निर्माण किया जा सके।

अनुवाद आज के व्यावसायिक युग की अपेक्षा ही नहीं अनिवार्यता भी बन गया है। यह एक सेतु है। सांस्कृतिक सेतु। सांस्कृतिक एकता, परस्पर आदान-प्रदान तथा 'विश्वकुटुम्बकम्' के स्वप्न को साकार करने की दृष्टि से अनुवाद की भूमिका उल्लेखनीय रही है। इस प्रकार वर्तमान युग में अनुवाद की महत्ता और उपयोगिता केवल भाषा और साहित्य तक ही सीमित नहीं है, वह हमारी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और राष्ट्रीय संहति और ऐक्य का माध्यम है जो भाषायी सीमाओं को पार करके भारतीय चिन्तन और साहित्य की सर्जनात्मक चेतना की समरूपता के साथ-साथ, वर्तमान तकनीकी और वैज्ञानिक युग की अपेक्षाओं की पूर्तिकर हमारे ज्ञान-विज्ञान के आयामों को देश-विदेश में संपृक्त करती है।

दूसरे शब्दों में, अनुवाद विश्व-संस्कृति, विश्व-बंधुत्व, एकता और समरसता स्थापित करने का एक ऐसा सेतु है जिसके माध्यम से विश्व ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में क्षेत्रीयतावाद के संकुचित एवं सीमित दायरे से बाहर निकल कर मानवीय एवं भावात्मक एकता के केन्द्र बिन्दु तक पहुँच सकता है और यही अनुवाद की आवश्यकता और उपयोगिता का सशस्त एवं प्रत्यक्ष प्रमाण है।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

आज जब सारा विश्व सामाजिक पुनर्व्यवस्था पर एक नये सिरे से विचार कर रहा है और व्यक्ति तथा समाज को एक नव्य स्वतंत्र दृष्टि मिली है वहीं हम भी व्यक्ति और देश को विश्व के परिप्रेक्ष्य में देखने-समझने का प्रयत्न कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद का महत्व और भी बढ़ जाता है। किसी समाज और देश की अभिव्यक्ति भाषा की सीमा के कारण एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रह जाए और दूसरों तक न पहुँच पाए तो विश्व स्तर पर एक नव्य सामाजिक पुनर्व्यवस्था की बात सार्थक कैसे हो सकती है!

Scanned with OKEN Scanner

[11:53 AM, 12/15/2023] Bansode K. D: हिंदी कहानी का उद्भव एवं विकास

मानव के आदि काल से कहानी कहने, सुनने, सुनाने की प्रवृत्ति चली आ रही है। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथों में कहानी का महत्व प्राय: देशों में है। भारतीय वांगमय में वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा पुरानी हिंदी में किसी न किसी स्वरूप में कहानी विद्यमान है, इसके अतिरिक्त पुराणों, उपनिषदों, ब्राह्मणों, रामायण, महाभारत, पालि जातक, तथा पंचतंत्र आदि में कहानियों का भंडार भरा पड़ा है। इन सभी कहानियों में उपदेशात्मक अथवा धार्मिक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है। आधुनिक अर्थ में इन्हें कहानी नहीं कहा जा सकता है।

कहानी शब्द की व्याख्या

'कहानी' शब्द संस्कृत कथानिका प्राकृत कहाणिआ, सिंहली-मराठी कहानी से विकसित हुआ है जिसका अर्थ मौखिक या लिखित कल्पित या वास्तविक, तथा गद्य या पद्य में लिखी हुई कोई भाव प्रधान या विषय प्रधान घटना, जिसका मुख्य उद्देश्य पाठकों का मनोरंजन करना, उन्हें कोई शिक्षा देना अथवा किसी वस्तु स्थिति से परिचित कराना होता है। इसका अंग्रेजी पर्याय 'स्टोरी' है।

आधुनिक हिंदी कहानी का प्रारंभ उन्नीसवीं सदी में हुआ जिसे कहानी या कथा कहते हैं इसका शाब्दिक अर्थ 'कहना' है। इस अर्थ के अनुसार जो कुछ भी कहा जाये कहानी है। किंतु विशिष्ट अर्थ में किसी विशेष घटना के रोचक ढंग से वर्णन को 'कहानी' कहते हैं। 'कथा' एवं 'कहानी' पर्यायवाची होते हुए भी समानार्थी नहीं हैं। दोनों के अर्थों में सूक्ष्म अंतर आ गया है। कथानक व्यापक अर्थ की प्रतीति कराता है इसमें कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी आदि का समावेश हो जाता है। कथा साहित्य के अंतर्गत मुख्य रूप से कहानी एवं उपन्यास को ही माना जाता है जबकि कहानी के अंतर्गत कहानी और लघु कथाएं ही आती हैं।

यूरोप में विकसित कहानी का स्वरूप अंग्रेजी और बंगला के माध्यम से बीसवीं शताब्दी के आरंभ में भारत आया। प्राचीन कहानी एवं आधुनिक कहानी के स्वरूप में पर्याप्त अंतर है। आधुनिक कहानी जनसाधारण मनुष्य जीवन से संबंधित लौकिक यथार्थवादी, विचारात्मक धरती के सुख तक सीमित है।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

हिंदी की प्रथम कहानी

हिंदी की प्रथम कहानी किसे माना जाए इस विषय में पर्याप्त मतभेद है। लगभग दर्जन भर कहानियां प्रथम कहानी की होड़ में सम्मिलित हैं जिन्हें आलोचक मान्यता प्रदान करते हैं।

सन् 1803 ई. में लिखी गई, हिंदी गद्य में कहानी शीर्षक से प्रकाशित होने वाली प्रथम रचना 'रानी केतकी की कहानी' है। इस कहानी के लेखक इंशा अल्ला खां हैं। डॉ. राम रतन भटनागर ने 'रानी केतकी की कहानी' को हिंदी प्रथम कहानी स्वीकारा है। किंतु इसकी संयोग बहुलता, अतिमानवीयता के कारण इसे प्रथम कहानी के रूप में नहीं स्वीकारा जा सकता है क्योंकि ये विशेषताएं आधुनिक कहानी में क्षम्य नहीं है। इसके विषय में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन समीचीन प्रतीत है कि यह नई परंपरा की प्रारंभिक कहानी नहीं है, बल्कि मुस्लिम प्रभावापन्न परंपरा की अंतिम कहानी है।

डॉ. बच्चन सिंह ने किशोरी लाल गोस्वामी कृत 'प्रणयिनी परिणय' (सन् 1887 ई.) को हिंदी की प्रथम कहानी माना है जबकि स्वयं इसके लेखक ने इसे उपन्यास कहा है। कारण यह बताया गया है कि सन् 1900 ई. तक कथा साहित्य को उपन्यास कहने की परिपाटी थी। इसलिए यह भी प्रथम कहानी नहीं है। क्योंकि इसका विभाजन सात निष्कों में किया गया है। प्रत्येक निष्क को अलग खंड मान लेने पर कहानी कई खंडों में विभक्त प्रतीत होती है। इस तरह खंडों में विभाजित कर कहानी लिखने की परिपाटी चलती रही है। प्रत्येक निष्क या खंड के प्रारंभ में श्लोक बद्ध नीति कथन हैं जो कहानी के रूप विन्यास में बाधक सिद्ध होते हैं। इस कहानी के रूप बंध पर आख्यान पद्धति का पूर्ण प्रभाव हैं। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली में केन्द्रीय भाव प्रगाढ़ प्रेम की सुखद परिणति दिखलाई गई है।

रैवरेंट जे. न्यूटन कृत 'जमींदार का दृष्टांत' तथा अनाम 'छली अरबी की कथा' नामक दो कहानियां अलीगढ़ से प्रकाशित 'शिलापंख' मासिक के 'कल की कहानी' स्तंभ में प्रकाशित देखकर यह अनुमान लगाया किंचित ये ईसाई धर्म प्रचार हेतु लिखी गई है। 'शिलापंख' के संपादक राजेंद्र गढ़वालिया ने सन् 1871 ई. में प्रकाशित इस

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

कहानी को अब तक प्राप्त कहानियों में प्राचीनतम माना है। प्राचीनतम होकर भी प्रथम कहानी नहीं क्यों धर्म प्रचार हेतु लिखी गई है।

डॉ. सुरेख सिन्हा गोस्वामी कृत 'इन्दुमती' को प्रथम कहानी मानने पर बल देते हुए लिखा है, "प्रथम कहानी का निर्धारण समय क्रम से होना चाहिए न कि कथानक, शिल्प, विचार धारा, या अन्य किसी दृष्टिकोण से।"

'रानी केतकी की कहानी' के पश्चात राजा शिव प्रसाद सितारे हिंद कृत 'राजा भोज का सपना'; भारतेंदु हरिश्चन्द्र कृत 'अद्भुत अपूर्व स्वप्न' का उल्लेख किया जा सकता है जिसमें कहानी की सी रोचकता विद्यमान है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आधुनिक ढंग की कहानियों का आरंभ 'सरस्वती पत्रिका' के प्रकाशन काल से स्वीकारा है। 'सरस्वती' में प्रकाशित कहानियां इस प्रकार हैं-

इंदुमती - किशोरी लाल गोस्वामी (1900 ई.)

गुलबहार - किशोरी लाल गोस्वामी (1902 ई.)

प्लेग की चुड़ैल - मास्टर भगवान दास (1902 ई.)

ग्यारह वर्ष का समय - राम चन्द्र शुक्ल (1903 ई.)

पंडित और पंडितानी - गिरजादत्त वाजपेयी (1903 ई.)

दुलाई वाली - बंग महिला (1907 ई.)

ये सभी कहानियां 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थीं। इस प्रकार प्रथम कहानीकार किशोरी लाल गोस्वामी तथा प्रथम कहानी 'इंदुमती' प्रमाणित होती है। 'इंदुमती' की चर्चा प्राय: प्रत्येक समीक्षक ने की है। इस पर टेम्पेस्ट की छाया मानकर इस की मौलिकता पर भी प्रश्न चिह्न लगा दिया। रामचन्द्र शुक्ल 'इंदुमती' को ही प्रथम कहानी मानते हैं।

रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है, "यदि 'इंदुमती' किसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो हिंदी की यही पहली मौलिक कहानी ठहरती है इसके उपरांत 'ग्यारह वर्ष का समय' और 'दुलाईवाली' का नंबर आता है।"

Scanned with OKEN Scanner

सुरेश सिन्हा को शुक्ल के कथन में चालाकी की गंध आती है। उन्हें लगता है कि इंदुमती को अनूदित करार देकर अपनी कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' को प्रतिष्ठित करना चाहते थे। किंतु यह प्रमाणित हो चुका है कि 'इंदुमती' मौलिक रचना नहीं है। डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल शिल्प की दृष्टि से रामचन्द्र शुक्ल कृत 'ग्यारह वर्ष का समय' (सन् 1903) हिंदी की प्रथम कहानी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी इसे आधुनिकता के लक्षण से युक्त माना है।

देवी प्रसाद वर्मा, ओंकार शरद और देवेश ठाकुर आदि समीक्षकों ने 'छत्तीसगढ़ मित्र' में प्रकाशित माधव राव सप्रे कृत 'एक टोकरी भर मिट्टी' (सन् 1901) को हिंदी की प्रथम कहानी का श्रेय दिया है। देवेश ठाकुर के अनुसार काल क्रमानुसार अपने समय के यथार्थ परिवेश से जुड़ी है। शिल्प की दृष्टि से सहजता, सरलता तथा भाषा की शुद्धता इसमें है। अत: जब तक इस दिशा में और अधिक शोध न हो जाए मान लेना चाहिए कि माधव राव सप्रे कृत 'एक टोकरी भर मिट्टी' हिंदी की प्रथम कहानी है। आर्थिक चेतना की कहानी होने के कारण यह आधुनिक अर्थमूला कहानियों की पहचान की पहली हिंदी कहानी है। 'दुलाईवाली' (सन् 1907 ई.) को यथार्थवादी चित्रण की सर्वप्रथम रचना माना है। किंतु बंग महिला का नाम नहीं ज्ञात है।

प्रो. वासुदेव 'इंदु' में प्रकाशित 'ग्राम' (1911 ई.) को हिंदी की पहली कहानी का गौरव प्रदान करते हैं। प्रसाद की यह पहली कहानी है।

शिवदान सिंह चौहान के विचार में हिंदी कहानी का श्रीगणेश प्रसाद और प्रेमचन्द से माना जाना चाहिए। राजेन्द्र यादव चन्द्रधर शर्मा गुलेरी कृत - 'उसने कहा था' (1916) को हिंदी की पहली मौलिक कहानी मानते हुए इसी से आधुनिक हिंदी कहानी का श्रीगणेश मानना चाहिए अब तक 'दुलाई वाली' को ही प्रथम कहानी माना जाता है। 'जमींदार का दृष्टांत' (1871 ई.) को अंग्रेजों की लिखी कहानी को प्रथम श्रेय नहीं मिलना चाहिए।

'दुलाईवाली' या 'ग्यारह वर्ष का समय' को हिंदी की प्रथम कहानी का श्रेय मिलना श्रेयस्कर है।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

हिंदी कहानी का विकास

हिंदी कहानी के विकास में प्रेम चन्द केन्द्र विन्दु है जिन्हें आधार बनाकर प्रेम चन्द पूर्वोत्तर, प्रेमचन्द, प्रेमचन्द परवर्ती युग के विभाग द्वारा संपूर्ण कहानी काल का विवेचन किया जाता रहा है। यह कहना कि प्रसाद का महत्व खो जाता है उनका युग नहीं बन पाता है। वे मूलतः कवि हैं उनका युग माना जा सकता है माना जाए। चरणों में अध्ययन वैज्ञानिक न होते भी आसान है किंतु सन् 1950 ई. से आज तक एक ही चरण नहीं माना जाना चाहिए। लगभग पांच चरणों में कहानी के विकास को विभाजित किया जाना श्रेयस्कर प्रतीत होता है।

प्रथम चरण (सन् 1870 - 1915 ई.)

द्वितीय चरण (सन् 1916 - 1935 ई.)

तृतीय चरण (सन् 1936 - 1955 ई.)

चतुर्थ चरण (सन् 1956 - 1975 ई.)

पंचम चरण (सन् 1976 से आज तक)

1. प्रथम चरण (सन् 1870-1915 ई.)

हिंदी का प्रारंभिक कहानियों के विषय में डॉ. रामदरश मिश्र का कथन सत्य है कि इनमें यथार्थ समर्थित आदर्श की व्यंजना लक्ष्य रूप में विद्यमान है। 'इंदुमति', 'दुलाई वाली', 'ग्यारह वर्ष का समय', 'जमींदार का दृष्टांत', 'प्रणयिनी परिणय', 'छली अरब की कथा' तथा 'एक टोकरी भर मिट्टी' आदि प्रमुख कहानियां हैं। जमींदार का दृष्टांत तथा प्रणयिनी परिणय में परोपकारी भावना का चित्राण किया गया है। 'एक टोकरी भर मिट्टी' की परिणति परहित में हुई है। 'जमींदार का दृष्टांत' में महाजन कृषकों की परेशानी से अवगत होकर सोचता है कि मेरे पास अपार धन दौलत है। इनके आर्थिक संकट का निवारण मैं कर सकता हूं।

'प्रणयिनी परिणय' में राजाराम शास्त्री की सहायता करता है। परोपकारी वृत्ति के आदर्श के साथ राज्य कर्मचारियों की धन लिप्सा के यथार्थ की ओर भी संकेत किया

Scanned with OKEN Scanner

गया है - "ऐसी चपलता, क्या राज्य कर्मचारी ऐसे-ऐसे भयंकर खतरे से बच सकते हैं? फिर तब क्या अनर्थ न्यून होने की संभावना हो सकता है? यदि इस समय वे न होता तो इधर न्यायाधीश अवश्य ही घूस लेकर इसे छोड़ देते।" 'ग्यारह वर्ष का समय' में प्रेम के आदर्श की अभिव्यक्ति हुई है - इस अदृश्य प्रेम का कर्म और कर्तव्य से घनिष्ठ संबंध है। इसकी उत्पत्ति केवल सदाशय और निःस्वार्थ हृदय में ही हो सकती है।

इस कालावधि की अधिकांश कहानियों में भावुकता और संयोग का बाहुल्य दृष्टिगोचर होता है। 'ग्यारह वर्ष का समय' में दीर्घ काल के उपरांत पति पत्नी का मेल एकाएक एक टूटे फूटे निर्जन भवन में हो जाता है। 'इंदुमती' में भी संयोग से ही चन्द्रशेखर इंदुमती का अतिथि बन जाता है। राधिका रमण सिंह कृत 'कानों में कंगना' में गहरी भावुकता के दर्शन होते है। अधिकांश कहानियां अंग्रेजी एवं बंगला कहानियों से प्रभावित हैं। कहानी शिल्प अति अव्यवस्थित है मात्रा 'इन्दुमती अरब की कथा' और 'एक टोकरी भर मिट्टी' शिल्प की दृष्टि से कसी हुई कहानियां है।

यद्यपि इन कहानियों का महत्व नहीं है। इतना अवश्य है कि अब तक कहानीकारों के एक मंडल का गठन हो चुका था तथा पत्रा पित्राकाओं के माध्यम से कहानी एक लोकप्रिय विधा का रूप धारण करती जा रही थी।

2. द्वितीय चरण (सन् 1916-1935 ई.)

1. प्रेमचन्द- द्वितीय चरण को कहानी की प्रेमचन्द की अपूर्व देन के कारण प्रेमचन्द युग कहा जाता है। मुंशी प्रेमचन्द द्वारा रचित कहानियों की संख्या लगभग तीन सौ से अधिक है जो मान सरोवर के आठ भागों में संग्रहीत हैं। इसके अतिरिक्त इनकी कहानियों के संग्रह 'सप्तसरोज', 'नव निधि', 'प्रेम पचीसी', 'प्रेम पूर्णिमा', 'प्रेम द्वादशी', 'प्रेम तीर्थ', तथा 'सप्त सुमन' आदि हैं। प्रेमचन्द पहले उर्दू में लिखते थे। उनका उर्दू में लिखा हुआ प्रसिद्ध कहानी संग्रह सोचे वतन सन् 1907 ई. में प्रकाशित हुआ था जो स्वातंत्रय भावनाओं से ओत-प्रोत होने के कारण अंग्रेजी सरकार द्वारा जब्त कर लिया गया था। सन् 1919 ई. में उनकी हिंदी रचित प्रथम कहानी 'पंच परमेश्वर' प्रकाशित हुई। उनकी कहानियों में इसके अतिरिक्त 'आत्माराम', 'शतरंज

Scanned with OKEN Scanner

के खिलाड़ी', 'रानी सारंधा', 'बज्रपात', 'अलग्योझा', 'ईदगाह', 'पूस की रात', 'सुजान भक्त', 'कफन', 'पंडित मोटे राम' आदि विशेष उल्लेखनीय है। प्रेमचन्द की कहानियों में जन साधारण के जीवन की सामान्य परिस्थितियों, मनोवृत्तियों एवं समस्याओं का मार्मिक चित्रण हुआ है। वे साधारण से साधारण बात को भी मर्मस्पर्शी रूप में प्रस्तुत करने की कला में निपुण कहानीकार थे। उनकी शैली सरल स्वाभाविक एवं रोचक है। जो पाठक के हृदय पर सीधा प्रहार करती है। उनकी सभी कहानियां सोद्देश्य हैं - उनमें किसी न किसी विचार या समस्या का अंकन हुआ है किन्तु इससे उनकी रागात्मकता में कोई न्यूनता नहीं आई है।

भाव-विचार, कला-प्रचार का सुंदर समन्वय किस प्रकार किया जा सकता है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण प्रेम चंद का कहानी साहित्य है। द्वितीय चरण में हिंदी कहानी दो विशिष्ट धाराओं में विभक्त होकर चलती है-

1. प्रथम धारा व्यक्ति हित या व्यक्ति सत्य के भावात्मक अंकन की है, जिसके सर्वप्रथम प्रमुख कहानीकार जयशंकर प्रसाद हैं और रायकृष्ण दास, विनोद शंकर व्यास तथा चतुरसेन शास्त्री इस परंपरा को अग्रसर करने वाले सहयोगी हैं।

2. द्वितीय धारा के विषय में डॉ. इंद्रनाथ मदान का कथन है "हिंदी कहानी के विकास की दूसरी दिशा जिसमें समष्टि-सत्य की संवेदना है, समष्टि - विकास की संचेतना है, समष्टि मंगल की भावना है, समष्टि यथार्थ को आत्मसात करने की प्रेरणा है, प्रेम चन्द के कहानी साहित्य से आरंभ होती है।" प्रेमचन्द के समसामयिक कहानीकार सुदर्शन और विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक प्रेमचन्द की कथा दृष्टि का समर्थन करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।

प्रेमचन्द और उनके सहयोगी कहानीकारों में समकालीन यथार्थ की आदर्शात्मक परिणति मिलती है। अपनी कहानी यात्रा के अंतिम चरण में प्रेमचंद ने स्वयं को आदर्श के मोह से अलग कर दिया था लेकिन सुदर्शन, विश्वंभर नाथ शर्मा 'कौशिक' ज्वाला दत्त शर्मा आदि बराबर आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानियां लिखते रहे। इस दृष्टि से कौशिक की 'रक्षा बंधन', 'सुदर्शन की एलबम', 'हार जीत' और 'एथेन्स का

Scanned with OKEN Scanner

सत्याग्रही' उल्लेखनीय कहानियां हैं। प्रेमचन्द की कहानी यात्रा के तीन मोड़ माने जा सकते हैं।

1. 'पंच परमेश्वर', 'बड़े घर की बेटी', 'नमक का दरोगा' आदि प्रारंभिक कहानियों में उनका आग्रह पुरातन आदर्शों को प्रतिष्ठित करता प्रतीत होता है। इन कहानियों में उपदेश का प्रच्छन्न स्वर सुनाई देता है।

2. सन् 1920-30 ई. के मध्य लिखी गई गांधी वादी विचार धारा गतह पर है।

3. 'मैकू', 'शेख नाद', 'दुर्गा मन्दिर', 'सेवा मार्ग' आदि कहानियों में प्रेम चन्द स्थूल कथात्मकता को छोड़कर यथार्थ को विश्लेषण और संवेदन के स्तर पर ग्रहण करते दिखाई देते हैं। डॉ. बचन कुमार सिंह के अनुसार, "चरित्रों के चित्रण में मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताओं का समावेश भी उनमें आ गया है। नाटकीयता तथा व्यंग्य के पैनेपन के कारण उसमें जीवंतमयता और प्रभान्विति की सघनता आ गई है। 'नशा', 'पूस की रात' और 'कफन' आदि कहानियां प्रेम चन्द की कहानी कला के अंतिम चरण की है। यहां तक आते-आते प्रेम चन्द अपनी सारी आस्थाओं का परित्याग कर देते हैं और जीवन के प्रति उनकी दृष्टि अधिक तीखी और निर्मम हो गई है। इन कहानियों में जो सूक्ष्मता और सांकेतिकता विद्यमान है वह 'नई कहानी' की अच्छी कहानियों में भी नहीं है। यह कम महत्वपूर्ण नहीं है कि हिंदी कहानी का विकास प्रेमचन्द द्वारा संकेतित दिशा में ही हुआ है।

प्रेमचन्द की कहानियों में जहां एक ओर युग का सच्चा चित्राण है, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक संदर्भों के विश्लेषण की कोशिश है वहीं दूसरी ओर प्रेम, सहानुभूति, तपस्या, सेवा आदि महनीय मूल्यों का जोरदार समर्थन उनमें है। अधिकांश कहानियों में प्रेम चंद ने जन साधारण के जीवन को उसी की भाषा में उपस्थित किया है। वे संभवत: पहले कहानीकार हैं जिनकी कहानियों में ग्रामीण जीवन अपनी समूची शक्ति और सीमा के साथ उभरा है। डॉ. भगवत स्वरूप मिश्र ने लिखा है, "मानव स्वभाव के परिचय, युगबोध, विषय क्षेत्रा के विस्तार, कहानी कला के उत्कर्ष आदि की दृष्टि से प्रेमचन्द स्कूल का एक भी कहानीकार प्रेमचन्द की गरिमा को नहीं पहुंच सका।"

Scanned with OKEN Scanner

2. जयशंकर प्रसाद - जयशंकर प्रसाद की प्रथम कहानी 'ग्राम' सन् 1911 ई. में 'इंदु' में प्रकाशित हुई और जीवनपर्यंत उन्होंनके कुल 69 कहानियां लिखीं। देवेश ठाकर का कथन है, "प्रसाद जी पहले कहानीकार हैं जिन्होंने हिंदी को बंगला, अंग्रेजी तथा फ्रेंच अनुवादों से मुक्त कर, उसके स्वरूप को मौलिकता और स्थिरता प्रदान की।" इसी आधार पर कुछ आलोचक प्रसाद को प्रथम कहानीकार तथा उनकी कहानी 'ग्राम' को प्रथम कहानी मानते हैं। प्रसाद की कहानियों की विशिष्टता उनके पात्रों के अंतर्द्वन्द्व उद्घाटन, काव्यात्मक अभिव्यक्ति और कहानी के मार्मिक अंत में निहित है, यद्यपि कविता और नाटक का शिल्प कभी कहानी में प्रमुख हो उठता है और उसकी संरचना में गड़बड़ी पैदा करता है।

प्रसाद की कहानियों में वस्तुगत वैविध्य बिलकुल न हो, ऐसा नहीं है। 'पुरस्कार', 'दासी तथा गुंडा' आदि में इतिहास का प्रयोग किया गया है जबकि 'मछुआ बड़ा' और 'छोटा जादूगर' में सामाजिक विषमता को उभारा गया है। अधिकतर कहानियों में कथा सूत्र की क्षीणता दृष्टिगोचर होती है। लेकिन 'दासी' एवं 'मालवती' आदि कहानियों में अनावश्यक अंश भी कम नहीं है। भावुकता की स्फीति कहानी को प्रतिघातित करती है। इन दोषों के होते हुए भी प्रसाद की कथन भंगिमा और चारित्रिक सृष्टि कहानियों को अविस्मरणीय बना देती है। प्रसाद का शिल्प प्राय: 'ग्राम' कहानी से लेकर 'मालवटी' तक एक समान रहा है और इसका अनुकरण नहीं हो पाया है।

प्रसाद की शैली में लिखी गई हृदयेश और विनोद शंकर व्यास की अनेक कहानियां असफल रही हैं। उनके शिल्प के संबंध में डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल ने लिखा है, "हिन्दी कहानी साहित्य में प्रसाद जी एक ऐसे कहानीकार हैं जिनकी कहानी भावों की अनुवर्तिनी रही है। शिल्प की अनुवर्तिनी नहीं।"

3. विश्वंभर नाथ शर्मा 'कौशिक' - विश्वंभर नाथ शर्मा 'कौशिक' (सन् 1891 - 1946 ई.) उर्दू से हिंदी में आने वाले प्रेमचंद युगीन कहानीकार हैं। उनकी प्रथम कहानी 'रक्षाबंधन' सन् 1913 ई. में प्रकाशित हुई थी। विचारधारा की दृष्टि से कौशिक प्रेमचन्द की परंपरा में आते हैं। उन्होंने समाज सुधार को कहानी का लक्ष्य बनाया। उनकी कहानियों की शैली अत्यंत सरस, सरल एवं रोचक है। उनकी हास्य एवं

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

विनोद से भरी हुई कहानियां 'चांद' में 'दुबे जी की चिट्ठियां' के रूप में प्रकाशित हुई थीं। उन्होंने लगभग 300 कहानियां लिखीं। जो 'कल्पमंदिर', 'चित्रशाला' आदि में संग्रहीत हैं।

4. आचार्य चतुर सेन शास्त्री - आचार्य चतुर सेन शास्त्री ने अपनी कहानियों में सामाजिक परिस्थितियों का चित्राण किया है। उनकी कहानियों के संग्रह 'रजकण' और 'अक्षत' आदि प्रकाशित हुए हैं। उनकी प्रमुख कहानियां मे 'दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी', 'दे खुदा की राह पर', 'भिक्षुराज' तथा 'ककड़ी की कीमत' विशेष उल्लेखनीय हैं।

5. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी - प्रेमचन्द युगीन कहानीकारों में मात्रा तीन कहानी लिखकर ख्याति प्राप्त करने वाले चंद्रधर शर्मा गुलेरी हैं। हिंदी कहानी साहित्य में इनका बहुत ऊँचा स्थान है। उनकी प्रथम कहानी 'उसने कहा था' सन् 1915 में प्रकाशित हुई थी जो अपने ढंग की अनूठी रचना है। इसमें किशोरावस्था के प्रेमांकुर का विकास, त्याग, और बलिदान से ओत-प्रोत पवित्रा भावना के रूप में किया गया है। कहानी का अंत गंभीर एवं शोकप्रद होते हुए भी इसमें हास्य एवं व्यंग्य का समन्वय इस ढंग से किया गया है कि उसमें मूल स्थायी भाव को कोई ठेस नहीं पहुंचती है। विभिन्न दृश्यों के चित्रण में सजीवता, घटनाओं के आयोजन में स्वाभाविकता एवं शैली की रोचकता सभी विशेषताएं एक से बढ़कर एक हैं।

कहानी की प्रथम पंक्ति ही पाठक के हृदय को पकड़कर बैठ जाती है और जब तक वह पूरी कहानी को पढ़ नहीं लेता है उसे छोड़ती नहीं है तथा जिसने एक बार कहानी पढ़ लिया वह 'उसने कहा था' वाक्य को आजीवन विस्मृत नहीं कर पाता है। भाव, विचार, शिल्प तथा शैली आदि सभी दृष्टियों से यह कहानी एक अमर कहानी है। गुलेरी की दूसरी कहानी 'सुखमय जीवन' भी पर्याप्त रोचक एवं भावोत्तेजक है।

इसमें एक अविवाहित युवक के द्वारा विवाहित जीवन पर लिखी गई पुस्तक को लेकर अच्छा विवाद खड़ा किया गया है। जिसकी परिणति एक अत्यंत रोचक प्रसंग में हो जाती है। 'बुद्धू का कांटा' भी अच्छी कहानी है।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

6. पं. बद्रीनाथ भट्ट 'सुदर्शन' - सुदर्शन का जन्म सन् 1896 ई. में हुआ था। कहानी कला में इनका महत्व कौशिक के समान स्वीकारा गया है। इनकी प्रथम कहानी 'हार की जीत' 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थी। तब से अनेक कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जैसे 'सुदर्शन सुधा', 'सुदर्शन सुमन', 'तीर्थ यात्रा', 'पुष्प लता', 'गल्प मंजरी', 'सुप्रभात', 'नगीना', 'चार कहानियां', तथा 'पनघट' आदि।

उन्होंने अपनी कहानियों में भावनाओं एवं मनोवृत्तियों का चित्रण अत्यंत सरल एवं रोचक शैली में किया है।

7. पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' - उग्र का हिंदी कहानी जगत में प्रवेश सन् 1922 ई. में हुआ। उग्र की उग्रता को परिलक्षित आलोचकों ने उन्हें 'उल्कापात', 'धूमकेतु', 'तूफान' तथा 'बवंडर' आदि नामों से विभूषित किया। इसी से आपकी विद्रोही प्रवृत्ति का अनुमान लगाया जा सकता है जिसको ऐसी ऐसी उपमाएं या उपाधियां मिली हों उसकी कहानी कला कैसी होगी? सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

उनकी कहानियों 'वीभत्स' एवं 'कुरूपता' को भी स्थान मिल गया है किन्तु उग्र का उद्देश्य जीवन की कुरूपता का प्रचार करना नहीं था अपितु कुरूपता का समूल अंत करना था।

उनके कहानी संग्रह 'दोजख की आग', 'चिंगारियां', 'बलात्कार' तथा 'सनकी अमीर' आदि प्रकाशित है।

8. ज्वालादत्त शर्मा - ज्वालादत्त शर्मा ने बहुत कम कहानियां लिखी हैं किन्तु हिन्दी जगत ने उनका अच्छा स्वागत किया है। उनकी कहानियों में 'भाग्य चक्र' तथा 'अनाथ बालिका' आदि उल्लेखनीय हैं।

इन कहानीकारों के अतिरिक्त द्वितीय चरण के अन्य कहानीकार रामकृष्ण दास, विनोद शंकर व्यास के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

3. तृतीय चरण (सन् 1936-1955 ई.)

हिंदी कहानी का तृतीय चरण जैनेंद्र के आगमन से आरंभ होता है। तृतीय चरण की कहानियों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

व्यक्ति - सत्य का उद्घाटन, मनोवैज्ञानिक धारणाओं के संदर्भ में करने वाली कहानियां - जिनका प्रतिनिधित्व जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, भगवती प्रसाद वाजपेयी और पहाड़ी आदि कहानीकार करते हैं।

समाज सापेक्ष- इस वर्ग की कहानियों का समाज सापेक्ष प्रश्नों से संबंध है। इस वर्ग के प्रमुख कहानीकार यशपाल, रांगेय राघव, भैरवप्रसाद गुप्त, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' और अमृत राय हैं।

व्यक्ति सत्य-समष्टि सत्य- इस वर्ग में वे कहानीकार आते हैं जो व्यक्ति सत्य तथा समष्टि सत्य दोनों को सुविधानुसार अपनी कहानियों का आधार बनाते है। अश्क और भगवती चरण वर्मा आदि इसी वर्ग में आते हैं।

1. जैनेन्द्र कुमार - जैनेन्द्र कुमार ने स्थूल समस्याओं को कहानी का विषय न बनाकर सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विषयों को कहानी का विषय बनाया। उन्होंने हिन्दी कहानी को एक नवीन अंतर्दृष्टि, संवेदनशीलता एवं दार्शनिक गहनता प्रदान की। सामान्य मानव की सामान्य परिस्थितियों को न लेकर असामान्य मानव की असामान्य परिस्थितियों से प्रभावित मानसिक प्रक्रियाओं का व्यापक विश्लेषण किया है। उनका दृष्टिकोण समष्टिगत न होकर व्यष्टिगत था, भौतिकवाद की अपेक्षा आध्यात्मिक वाद था। उनके पास विषय सामग्री का अभाव दृष्टिगोचर होता है। इसलिए प्रत्येक रचना में एक ही तथ्य का पिष्टपेषण करते हुए दिखलाई पड़ते हैं।

घटनाओं की अपेक्षा उन्होंने चरित्र-चित्रण तथा शैली को अधिक महत्व दिया है। इनकी कहानियों के संग्रह 'वातायन', 'स्पर्धा', 'पाजेब', 'फांसी', 'एक रात', 'जयसंधि' तथा 'दो चिड़िया' आदि हैं।

2. जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' - जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' ने अपनी कहानियों में करुण रस की अभिव्यक्ति मौलिक ढंग से की है। उनके कहानी संग्रह 'किसलय', 'मृदुल' तथा 'मधुमयी' आदि प्रकाशित हुए हैं। इनकी कहानियों में मार्मिकता का हृदय ग्राह्य रूप मिलता है। इसलिए इनकी कहानियों का स्थान अत्यधिक ऊंचा है।

3. चंडीप्रसाद 'हृदयेश' - चंडी प्रसाद हृदयेश का दृष्टिकोण आदर्शवादी था। उनकी कहानियों में सेवा, त्याग, बलिदान तथा आत्म शुद्धि आदि की उच्च भावनाओं का

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

निर्वाण किया गया है। उनमें भावुकता की प्रधानता है। उनकी कहानी के संग्रह 'नंदन निकुंज' तथा 'वनमाला' आदि नामों से प्रकाशित हुए हैं।

4. गोविंद वल्लभ पंत - गोविंद वल्लभ पंत की कहानियों में यथार्थ की कटुता तथा कल्पना की रंगीनी का दिव्य समन्वय मिलता है। उनमें प्रणय-भावनाओं का निर्वाण अति मधुर रूप में किया गया है।

5. सियाराम शरण गुप्त - सियाराम शरण गुप्त ने कविता की तरह कहानी क्षेत्र में भी अच्छी सफलता प्राप्त की है। उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी 'झूठ-सच' है जिसमें आधुनिक युगीन यथार्थ वादी लेखकों पर तीखा व्यंग्य किया है। कहानी कला की दृष्टि से भी यह कहानी अद्वितीय है। उनकी कहानियों का संग्रह 'मानुषी' है।

6. वृंदावन लाल वर्मा - वृंदावन लाल वर्मा ने कहानी की अपेक्षा उपन्यास के क्षेत्र में अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की है। उनकी कहानियों में भी कल्पना एवं इतिहास का समन्वय मिलता है। इनकी कहानियों का संग्रह 'कलाकार का दंड' है। वर्मा की शैली में सरलता एवं स्वाभाविकता होती है।

7. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' - अज्ञेय की कहानियां अभिजात्य बौद्धिकता द्वारा लिखी गई मनोवैज्ञानिक कहानियां हैं। कथ्यगत विविधता के होते हुए भी इन कहानियों का अनुभव सांसारिक, व्यक्तिगत तथा अत्यधिक सीमित है। मनोविज्ञान के सिद्धांतों का स्मरण और सचेत रूप से केन्द्रित करने का आग्रह भी 'कड़ियां', 'पुलिस की सीटी', 'लेटर बॉक्स', 'हीलोबीन बतखें' आदि कुछ कहानियों में अत्यधिक मुखर हो उठा है। डॉ. रामदरश मिश्र का कथन है, "अज्ञेय का गरिष्ठ व्यक्तित्व उनकी कहानियों को एक निजता प्रदान करता है।

इस निजता की बनावट बड़ी जटिल है। इसीलिए इनकी कहानियों में लेखक की वैचारिकता, अनुभव, अध्ययन, तटस्थता, मानवीय प्रतिबद्धता आदि का बड़ा ही जटिल सहअस्तित्व दिखाई पड़ता है। इस जटिल सहअस्तित्व का परिणाम शुभ-अशुभ दोनों है। एक ओर वे इसके चलते 'रोज' जैसी अच्छी कहानी लिखने में समर्थ एवं सफल सिद्ध हुए हैं, वहीं दूसरी ओर घोर बौद्धिकता से परिपूर्ण रचनाएं भी उन्होंने की हैं। 'रोज' में एक रस और यांत्रिक ढंग से जीवन जीने का संदर्भ अति

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

सहजता किंतु तीखेपन के साथ चित्रित हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि अज्ञेय मनोविज्ञान के किसी सिद्धांत के प्रतिपादन हेतु कहानी लिख रहे हैं।

यशपाल, रांगेय राघव, अमृत लाल नागर एवं बेचन शर्मा 'उग्र' सामाजिक समस्याओं का समाधान प्राप्त करना तथा उसी में जूझते रहने का क्रियाकलाप करने का श्रीगणेश मुंशी प्रेमचंद ने किया था। सामाजिक समस्याओं का समाधान प्राप्त करने में यशपाल, रांगेय राघव, अमृतलाल नागर एवं बेचन शर्मा 'उग्र' उनके अनुगामी रहे हैं।

8. यशपाल - यशपाल सामाजिक प्रश्नों एवं समस्याओं को मार्क्सवादी जीवन दृष्टि के माध्यम से देखते हैं क्योंकि वे मार्क्सवादी कामरेड था। साम्यवाद को प्रधानता देते थे। सन् 1936 ई. में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। जिसने तत्कालीन रचनाकारों पर अपना प्रभाव डालना प्रारंभ कर दिया तथा प्रगतिशील रचनाएं सामने आने लगीं।

यशपाल इन प्रतिबद्ध रचनाकारों में अग्रगण्य थे। यशपाल का अनुभव संसार अति व्यापक तथा वैविध्यपूर्ण है। एक ओर मध्यवर्गीय जीवन की विसंगति, असहायता और यातना को व्यक्त करने वाली 'परदा', 'फूलों का कुरता', 'प्रतिष्ठा का बोझ' आदि कहानियां है। दूसरी ओर श्रमशील विश्व के संघर्ष और शोषण तंत्र की विरोधी कहानियां हैं, जिनमें 'राग', 'कर्मफल', 'वर्दी' तथा 'आदमी का बच्चा' महत्वपूर्ण कहानियां हैं।

पुरातन मूल्यों, अप्रासंगिक रूढ़ियों और नैतिक निषेधों को तिरस्कृत करने का उनका ढंग वैयक्तिक है। धारदार व्यंग्य उनकी अभिव्यंजना का सर्वाधिक सबल अस्त्र है। यशपाल में जहां कथ्यगत समृद्धि है वहीं शिल्पगत प्रभाव भी है। कुछ प्रगतिवादी कहानीकारों की तरह उनकी कहानियों में शिल्प का अवमूल्यन नहीं दिखलाई पड़ता है।

9. रांगेय राघव - राघव की कहानियां मार्क्सवादी बोध से सम्पन्न होकर भी कहीं-कहीं उससे बाहर जाती हुई दृष्टिगोचर होती है। अनुभव की वास्तविकता उनकी प्रथम विशेषता है। रांगेय राघव की सर्वश्रेष्ठ कहानी मदल है।

Scanned with OKEN Scanner

10. बेचन शर्मा उग्र - बेचन शर्मा 'उग्र' को प्रेमचंद युगीन कहानीकारों में गिना जाता है। वास्तव में उनकी कहानी कला का उमभांश प्रेम चंदोत्तर युग में ही अस्तित्व में आया। वे घोषित माक्र्सवादी न थे लेकिन सामाजिक विसंगतियों को उधेड़ने में वे प्रगतिशीलता का परिचय देते हैं। 'कला का पुरस्कार', 'ऐसी होली खेलो लाल', 'उसकी मां' आदि उनकी श्रेष्ठ कहानियां हैं।

11. उपेन्द्र नाथ 'अश्क' - अश्क को न तो प्रगतिवादी कहानीकार कहा जा सकता है न व्यक्तिवादी। डॉ. रामदरश मिश्र ने अश्क के माक्र्सवादी दृष्टिकोण को लेकर कहानी लिखने वालों को प्रगतिशील कोटि में रखा है। वस्तुत: अपनी संवेदना के दृष्टिकोण से वे प्रगतिशील कथा चेतना से स्पष्ट अलगाव रखते है। उनके भाषा शिल्प पर प्रेम चन्द का गहन प्रभाव दिखलाई पड़ता है। एक ओर अश्क ने 'डानी' और 'कांड़ा का तेली' जैसी अति चुस्त प्रभावशाली कहानियां लिखी है वहीं दूसरी ओर 'एंबेसडर' तथा 'बेबसी' जैसी यौन समस्याओं वाली कहानियों में उनको सफलता नहीं मिली है।

उनकी कहानियों पर टिप्पणी करते हुए हृषिकेश ने लिखा है - "वह इतनी सपाट और आत्मीय हैं कि पढ़कर चिंता नहीं होती, न खेद होता है, न आश्चर्य न जिज्ञासा और न ही व्यामोह, केवल तरल अनुभूति देने वाली अश्क की कहानियां अन्वेषण तो करती हैं अन्वेषक नहीं बनाती और पाठक के समक्ष आत्म निर्णय का संचार नहीं करती।" अश्क की बहुत सी कहानियों पर यह टिप्पणी सटीक बैठती है।

12. भगवती चरण वर्मा - भगवती बाबू अपनी व्यंग्यात्मक कहानियों के लिए चर्चा का विषय बने रहे। उनको प्रतिष्ठित करने में 'प्रायश्चित', 'दो बांके', और 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' आदि कहानियों का विशेष योगदान रहा है। किन्तु 'मोर्चा बंदी' संग्रह की कहानियां उनको चुकाने में सहयोगी सिद्ध हुई है।

इन कहानीकारों के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक कहानीकारों में भगवती प्रसाद वाजपेयी तथा पहाड़ी का नाम भी उल्लेखनीय है। प्रगतिवादी कहानीकारों में भैरव प्रसाद गुप्त तथा अमृत राय का भी कहानी साहित्य को प्रमुख योगदान है।

4. चतुर्थ चरण (सन् 1956-1975 ई.)

Scanned with OKEN Scanner

हिंदी कहानी के चतुर्थ चरण में जैनेंद्र द्वारा प्रवर्तित मनो-विश्लेषण की परंपरा का विकास हुआ। भगवती प्रसाद वाजपेयी तथा राम प्रसाद आदि का योगदान मिला।

1. भगवती प्रसाद वाजपेयी - वाजपेयी ने अपनी कहानियों में मनोवैज्ञानिक सत्यों को उद्घाटित किया। उनके अनेक कहानी संग्रह प्रकाशित हुए जिनमें 'हिलोर', 'पुष्करिणी' तथा 'खाली बोतल' आदि प्रमुख हैं। उनकी कहानियों में 'मिठाई वाला', 'झांकी', 'त्याग', तथा 'वंशीवादन' आदि श्रेष्ठ कहानियां मानी जाती है। भगवती चरण वर्मा ने कहानी के क्षेत्रा में असाधारण सफलता प्राप्त की है। उनमें विश्लेषण की गरिमा तथा गंभीरता है। मार्मिकता एवं रोचकता का गुण भी विद्यमान है। उनके कहानी-संग्रह 'खिलते-फूल', 'इंस्टालमेंट' तथा 'दो बांके' आदि उल्लेखनीय हैं।

2. सच्चिदानन्द हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय - चतुर्थ चरण के मनोवैज्ञानिक कहानीकारों में भी अज्ञेय का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने मनोविश्लेषण परंपरा को और आगे बढ़ाया है। 'विपथगा', 'परंपरा', 'कोठरी की बात' तथा 'जयदोल' इनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं।

3. इला चन्द्र जोशी इनके कहानी संग्रह 'रोमांटिक छाया', 'आहूति' तथा 'दीवाली और होली' आदि हैं। जोगी ने मनोविज्ञान के सत्यों का उद्घाटन किया जिससे अन्य लेखकों की अपेक्षा इनका अधिक मर्मस्पर्शी रूप सामने आया।

4. उपेंद्र नाथ 'अश्क' सामाजिक विषयों को अपनाने वाले लेखकों में उपेंद्रनाथ 'अश्क' का नाम चतुर्थ चरण में भी प्रमुख है। उनकी कहानियों में 'पिंजरा', 'पाषाण', 'मोती', 'दूलो', 'मरुस्थल', 'गोखरू', 'खिलौने', 'चट्टान', 'जादूगरनी' तथा 'चित्राकार की मौत' आदि प्रमुख हैं। इनको अत्यधिक लोकप्रियता मिली। अश्क की विषय वस्तु, शैली एवं रोचकता की दृष्टि से प्रेम चंद की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले कहानीकार हैं।

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

5. यशपाल यशपाल ने अपनी कहानियों में आधुनिक समाज की विषमताओं पर करारा व्यंग्य किया हैं उनकी कहानियों में पराया सुख, 'हलाल का टुकड़ा', 'ज्ञान दान', 'कुछ न समझ सका', 'जबरदस्ती' तथा 'बदनाम' आदि उल्लेखनीय हैं।

6. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार विद्यालंकार का कहानी क्षेत्र में विशेष नाम है। आपकी कहानियों के द्वारा कहानी-कला का विकास हुआ है। विद्यालंकार के कहानी संग्रह 'चन्द्रकला' तथा 'अमावस' है।

7. राम प्रसाद पहाड़ी पहाड़ी का हिंदी कहानी को विशेष योगदान है। पहाड़ी के कहानी संग्रह 'सड़क पर', 'मौली' तथा 'बरगद की जड़े', आदि उल्लेखनीय है।

5. पंचम चरण (सन् 1976 से आज तक)

नई कहानी नामकरण - कमलेश्वर का कथन है कि जितेंद्र एवं ओम प्रकाश श्रीवास्तव ने कहानी को नवीन रूप देने का प्रयास किया। कहानी के नवीन रूपों को 'नई कहानी' नाम देने का श्रेय दुष्यंत कुमार को है। डॉ. बच्चन सिंह ने सन् 1950 ई. में शिवप्रसाद सिंह द्वारा प्रकाशित 'दादी मां' में नयी कहानी के तत्वों का अवलोकन किया। उनके विचार से सन् 1956-57 में नई कविता के साम्य पर इसका नाम 'नई कहानी' रख दिया गया। सूर्य प्रकाश दीक्षित नई कहानी के शुभारंभ का श्रेय कमलेश्वर मोहन राकेश तथा राजेन्द्र यादव को संयेत रूप में देते हैं। वास्तव में किसी व्यक्ति विशेष या व्यक्तियों को किसी आंदोलन का श्रेय देना उचित प्रतीत नहीं होता है। सार्थक आंदोलन परिवेश की मांग तथा पूरी पीढ़ी के प्रयास की उपज होता है।

हिंदी कहानी साहित्य में नएपन का प्रारंभ 'पूस की रात', 'नशा' तथा 'कथन' जैसी कहानियों से हो चुका था। सन् 1950 ई. तक आते आते कहानी के कथा शिल्प में पर्याप्त परिवर्तन हो चुका था। नएपन की यह प्रवृत्ति सन् 1956.57 ई. में आंदोलन का रूप ग्रहण कर चुकी थी। डॉनामवर सिंह उन आलोचकों में से हैं जिन्होंने नई कहानी के प्रवक्ता की भूमिका निभाई है। कहानी के नवबर्षांक सन् 1956-58 में प्रकाशित उन लेखों से इस आंदोलन को अति बल मिला।

नई कहानी उस समय लिखी गई जब कहानीकारों में देश की स्वतंत्रता को लेकर संशय की भावना का उदय हो रहा था। मोह भंग की पृष्ठ भूमि का निर्माण हो रहा

Scanned with OKEN Scanner

LATUR

था। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के विभाजन के फलस्वरूप बड़े पैमाने पर मूल्य संक्रमण तथा मूल्य-विघटन का परिवेश तैयार हो गया था। राजनीतिक पृष्ठभूमि में भी सेवा, त्याग, करुणा, सत्य, प्रेम आदि गांधीवादी मूल्य कड़ी आजमाइश में पड़ गए थे।

डॉ. भगवान दास वर्मा का कथन है, "परंपरावादी जीवन-दर्शन की असारता, भारतीय संस्कृति की नए युग के संदर्भ में निरर्थकता, स्वतंत्रता प्राप्ति और भग भंग की अवस्था, जीवनादर्शों की अनिश्चितता, व्यक्ति जीवन, अकेलेपन एवं अजनबीपन एहसास आदि अनुभूत सत्यों के अनेक स्तरीय संदर्भों के परिपार्श्व पर नई कहानी विकसित हो रही है।

Scanned with OKEN Scanner